



सोनार बांग्ला

राजभाषा पत्रिका



संयुक्तांक - वर्ष 2020 एवं 2021

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-I), पश्चिम बंगाल

ट्रेजरी बिल्डिंग्स (प्रथम तल), 2, गवर्मेन्ट प्लेस (पश्चिम), कोलकाता - 700 001

दूरभाष :- 033-2213-3151/3152/3163 फैक्स :- 033-2213-3174

वेबसाईट :- www.agwb.cag.gov.in

ई-मेल पता :- hindicellgssa.wbl.au@cag.gov.in

हिंदी दिवस एवं हिन्दी पखवाड़ा-2021 उद्घाटन समारोह

02:22

Leave

Sarat Chaturvedi

KB

PAG AUDIT 1 W...

कार्यालय प्रधान महालेखाकार
(लेखा शाखा-1)
पश्चिम बंगाल
कोलकाता

11:49
14-09-2021

Type here to search

31°C Mostly cloudy

ENG

माननीय प्रधान महालेखाकार महोदय हिन्दी पखवाड़ा-2021 का ऑनलाईन माध्यम से उद्घाटन करते हुए।

सोनार बांग्ला

राजभाषा पत्रिका

संयुक्तांक

वर्ष - 2020 एवं 2021



कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-I), पश्चिम बंगाल

ट्रेजरी बिल्डिंग्स (प्रथम तल), 2, गवर्मेन्ट प्लेस (पश्चिम), कोलकाता - 700 001

दूरभाष :- 033-2213-3151/3152/3163 फैक्स :- 033-2213-3174

वेबसाईट :- www.agwb.cag.gov.in

ई-मेल पता :- hindicellgssa.wbl.au@cag.gov.in

मुखपृष्ठ परिचय - नोबेल विजेता विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार रवीन्द्रनाथ टैगोर।

सोनार बांग्ला परिवार

मुख्य संरक्षक

श्री शरत चतुर्वेदी, प्रधान महालेखाकार

संरक्षक

डॉ. नंद दुलाल दास, उप महालेखाकार (प्रशासन/ए.एम.जी.-I)

डॉ. लिंगराज नाइक एस., उप महालेखाकार (स्थानीय लेखापरीक्षा विभाग)

श्री विनोद परिहार, उप महालेखाकार (ए.एम.जी.-IV)

श्री मनोज कुमार मोवार, कल्याण अधिकारी

संपादक मंडल

प्रधान संपादक - श्री शांतनु दास, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

मुख्य संपादक - श्री अरूप दत्ता, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

संपादक

श्रीमती ओलिभ बारा
पर्यवेक्षक

श्री बरूण राय
पर्यवेक्षक

श्री प्रशांत कुमार
वरिष्ठ अनुवादक

श्री अरुण विकास
कनिष्ठ अनुवादक

संपादन सहयोग

श्री बिपुल कुमार साव
कनिष्ठ अनुवादक

श्रीमती गुंजा कुमारी
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

श्री प्रमोद कुमार दास
कनिष्ठ अनुवादक

टंकण कार्य

श्री सोनु कुमार चौधरी, आंकड़ा प्रविष्टक

लेख जांच एवं पुनरीक्षण समिति

अध्यक्ष - श्री मनोज कुमार मोवार, कल्याण अधिकारी

सदस्य - श्रीमती रूणा बंद्योपाध्याय, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

- श्रीमती ओलिभ बारा, पर्यवेक्षक

- श्री प्रशांत कुमार, वरिष्ठ अनुवादक

अस्वीकरण :- लेखक/रचनाकारों के विचार उनके निजी विचार हैं। उनके विचारों से मुख्य संरक्षक/संरक्षक/लेख जांच एवं पुनरीक्षण समिति/संपादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	संदेश		
1.	प्रधान महालेखाकार का संदेश		
2.	उप महालेखाकार (प्रशासन/ए.एम.जी.-I) का संदेश		
3.	उप महालेखाकार (स्थानीय लेखापरीक्षा विभाग) का संदेश		
4.	उप महालेखाकार (ए.एम.जी.-IV) का संदेश		
5.	कल्याण अधिकारी का संदेश		
6.	संपादकीय		
7.	आपके पत्र		
	लेख/स्वानुभूति/जीवन दर्शन/कहानी	लेखक/रचनाकार	पृष्ठ संख्या
8.	महामारी की समस्याओं के बीच प्रसन्न रहने की कला	श्री मनोज कुमार मोवार	1-2
9.	रशिया डायरी	श्री प्रशान्त कुमार	3-11
10.	पुष्पांजलि	श्रीमती रानी	12-13
11.	विकल्प	श्री प्रमोद कुमार दास	14
12.	यादें	श्री सन्दीप कुमार सरकार	15-16
13.	चौथा बच्चा	श्री प्रफुल्ल कुमार झा	17-18
14.	मां की ममता	श्रीमती सुदेश कुमारी	19-20
15.	कोरोना डायरी	श्री सोनु कुमार चौधरी	21
16.	समाज एवं नारी	श्रीमती सोमा चक्रवर्ती भादुड़ी	22-23
17.	डिस्टेन्सिंग	श्री बिपुल कुमार साव	24
18.	कामकाजी महिलाएं	श्रीमती गुंजा कुमारी	25-26
19.	स्वामी विवेकानंद के जीवन की आठ प्रेरक कहानियां	श्रीमती अमृता घोष	27-29
20.	मनुष्य एवं परिस्थितियां	श्री आशीष कुमार	30
21.	आत्मनिर्भरता तथा कोविड नियंत्रण : संभावना और उम्मीद	श्री उत्पल चटर्जी	31-32
22.	दुर्गा	श्री सन्दीप कुमार सरकार	33-34
23.	कोरोना की भयावहता	श्री अमरेश कुमार	35
	कविता/गीत/व्यंग्य		
24.	उलझन	श्री सुरजीत घोष	36-37
25.	बस्ती	श्री ओम प्रकाश चौधरी	38
26.	अनाथ	श्री प्रमोद कुमार दास	39-40
27.	लड़की	श्री प्रभात कुमार	41
28.	जिंदगी	श्री अरुण विकास	42-43
29.	अस्तित्व – एक आशा	श्री भास्कर सेनगुप्ता	44
30.	तुम्हें जीना है	श्री ओम प्रकाश चौधरी	45
31.	फासलें	श्रीमती ओलिभ बारा	46
32.	सुंदरता	श्री रूपक भादुड़ी	47
33.	कुछ तो कर	श्री प्रमोद कुमार दास	48
34.	अजीब बात है न?	श्री अमरेश कुमार	49
35.	पत्थर बनाम इंसान	श्री प्रमोद कुमार दास	50

प्रधान महालेखाकार का संदेश



कार्यालय की राजभाषा पत्रिका 'सोनार बांग्ला' के संयुक्तांक के प्रकाशन पर मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। कार्यालय के कर्मियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से इस पत्रिका को सुसज्जित करने में जो महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है, वह राजभाषा हिन्दी के प्रति उनकी निष्ठा और लगाव को दर्शाती है। यह पत्रिका राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के साथ ही कर्मियों की रचनात्मकता को अपनी लेखनी के माध्यम से व्यक्त करने का एक मंच भी प्रदान करती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि विविध रचनाओं से सुसज्जित यह पत्रिका सभी को राजभाषा हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग हेतु प्रेरित करेगी। पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु इसके सम्पादन कार्य से जुड़े सभी कर्मी बधाई के पात्र हैं। मैं पत्रिका के अनवरत सफल प्रकाशन एवं राजभाषा हिन्दी के उत्तरोत्तर विकास की कामना करता हूँ।

शरत चतुर्वेदी
प्रधान महालेखाकार

उप महालेखाकार (प्रशासन/ए.एम.जी.-I) का संदेश



अपार हर्ष का विषय है कि इस वर्ष राजभाषा हिन्दी को समर्पित पत्रिका 'सोनार बांग्ला' का संयुक्तांक प्रकाशित किया जा रहा है।

राजभाषा हिन्दी के आधिकारिक प्रयोग एवं इसके प्रचार-प्रसार की जो जिम्मेदारी हम पर है, उसे एक कदम और आगे ले जाने की दिशा में यह पत्रिका एक विनम्र प्रयास है। यह पत्रिका कार्यालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के संगठित प्रयासों का प्रतिबिम्ब बनकर हिन्दी के प्रति कार्यालय की निष्ठा को परिलक्षित कर रही है। इस पत्रिका के प्रकाशन में जिन्होंने अपना योगदान दिया है, वे सभी रचनाकार एवं संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं।

पत्रिका के सफल प्रकाशन व उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

डॉ. नंद दुलाल दास
उप महालेखाकार (प्रशासन/ए.एम.जी.-I)

उप महालेखाकार (स्थानीय लेखापरीक्षा विभाग) का संदेश



‘सोनार बांग्ला’ के नवीनतम संस्करण के लिए संदेश लिखते हुए मैं बहुत प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ।

हम सभी जानते हैं कि हम अपने जीवनकाल में एक सबसे बुरे अनुभव से गुजर रहे हैं। मुझे यह देखकर खुशी हुई कि कोविड महामारी के बावजूद इस नए संस्करण के प्रकाशन में बाधा नहीं आई। ‘सोनार बांग्ला’ अब एक परंपरा और कर्मियों के रचनात्मक आयाम का प्रतिफल बन गई है।

मैं इस अवसर का उपयोग यह कहने के लिए भी करना चाहता हूँ कि इस महामारी के दौरान हम जो पीड़ा और कष्ट देख रहे हैं, उसके बावजूद हम कैसे मजबूत बने रहें। मानव मन एक बहुमुखी, अनुकूलनीय तंत्र है जो पीड़ा और कष्ट का सामना करते हुए भी आशावादी और सकारात्मक बना रह सकता है। यही अवचेतन मन की शक्ति है। यह आगत-निर्गत संबंध के आधार पर कार्य करता है। हम जो कुछ इसमें डालते हैं, वही हमें मिलता है। इसलिए, पीड़ा और कष्ट के बावजूद हमेशा अधिक सकारात्मक दृष्टिकोण रखें और आप लाभान्वित होंगे। महामारी के संदर्भ में यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जिसने हमारी दुनिया को अस्त-व्यस्त दिया है। इसने हमारी दिनचर्या और योजनाओं को विरूपित कर दिया है। इसलिए शांत-चित्त और सकारात्मक रहें।

मैं हिंदी प्रकोष्ठ और उन समस्त कर्मियों को हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इस अद्भुत रचनात्मक उद्यम को मूर्त रूप देने के लिए अथक प्रयास किया। निरंतर कोविड संबंधी उपयुक्त व्यवहार का पालन करें और सुरक्षित रहें।

डॉ. लिंगराज नाइक एस.

उप महालेखाकार (स्थानीय लेखापरीक्षा विभाग)

उप महालेखाकार (ए.एम.जी.-IV) का संदेश



हमारे कार्यालय की पत्रिका 'सोनार बांग्ला' के संयुक्तांक का प्रकाशन होना राजभाषा हिन्दी के प्रसार की दिशा में सराहनीय प्रयास है। पत्रिका के प्रकाशन से राजभाषा के प्रगामी प्रयोग को प्रोत्साहन मिलता है, साथ ही यह कार्यालयीन जीवन में भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देने का कार्य करता है।

पत्रिका के सफल प्रकाशन पर संपादक मंडल को हार्दिक शुभकामनाएँ एवं सभी रचनाकारों को बधाई देता हूँ।

आशा करता हूँ कि 'सोनार बांग्ला' का यह नवीनतम अंक राजभाषा के विकास में अहम भूमिका निभाने में सफल होगा।

शुभकामनाओं सहित।

विनोद परिहार
उप महालेखाकार (ए.एम.जी.-IV)

कल्याण अधिकारी का संदेश



हमारे कार्यालय की राजभाषा में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'सोনার बांग्ला' के नवीनतम अंक के प्रकाशन पर मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। आज जब सारा विश्व कोरोना महामारी से त्रस्त है, इस कठिन दौर में भी कार्यालय कर्मियों द्वारा 'सोনার बांग्ला' का सफल प्रकाशन अपने आप में एक गौरवपूर्ण उपलब्धि का परिचायक है। यह कार्यालय कर्मियों की हिन्दी भाषा के प्रति अटूट निष्ठा एवं गहरे प्रेम को भी दर्शाता है। मैं हिन्दी पत्रिका के सामयिक सृजन से जुड़े सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों, खास कर हिन्दी अनुभाग के कर्मियों के प्रति सादर आभार प्रदर्शित करता हूँ जिनके अथक परिश्रम से पत्रिका का समय पर प्रकाशन संभव हो सका है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ पाठकों के मन को अवश्य भाएंगी। अंत में मैं 'सोনার बांग्ला' के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए इस शुभ अवसर पर राजभाषा हिन्दी के प्रति अपना श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ।

मनोज कुमार मोवार
कल्याण अधिकारी

संपादकीय



प्रिय पाठक बन्धु,

आपके मनोभावों को प्रेषित करने का सबसे सशक्त माध्यम भाषा है। यह कार्य अपनी मातृ-भाषा में अथवा अन्य ऐसी भाषा में किया जा सकता है जो वक्ता तथा श्रोता दोनों के लिए जानने व समझने योग्य हो। जहाँ तक हिन्दी का प्रश्न है, यह न केवल सरकारी कामकाज की भाषा है बल्कि पूरे भारतवर्ष में संपर्क सूत्र अर्थात् विचारों के आदान-प्रदान का सबसे सशक्त माध्यम है। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसके द्वारा पूरे भारत वर्ष में संवाद स्थापित किया जा सकता है।

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-I), कोलकाता, पश्चिम बंगाल के द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'सोनार बांग्ला' का संयुक्तांक आपके समक्ष प्रस्तुत है। इस पत्रिका में अधिकारियों/कर्मचारियों की रचनाओं को समाहित किया गया है। पत्रिका के इस अंक में प्रकाशित सभी रचनाओं के द्वारा राजभाषा हिन्दी के संवर्धन हेतु सार्थक प्रयास किया गया है।

मैं आशा करता हूँ कि 'सोनार बांग्ला' पत्रिका आगे भी अपनी उत्कृष्टता के साथ राजभाषा को सुशोभित करती रहेगी।

शुभेच्छा सहित।

शांतनु दास
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी
प्रधान संपादक



हिन्दी पखवाड़ा-2020 के अवसर पर वरिष्ठ उप महालेखाकार (प्रशासन) महोदय द्वारा कार्यालय की राजभाषा पत्रिका "सोनार बांग्ला" के 14वें अंक का विमोचन।



हिन्दी पखवाड़ा-2021 का उद्घाटन समारोह



हिन्दी पखवाड़ा-2021 का उद्घाटन समारोह



ऑनलाइन माध्यम से हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

आपके पत्र

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं पठनीय एवं उत्कृष्ट हैं। पत्रिका का मुखपृष्ठ बहुत ही आकर्षक एवं ज्ञानवर्धक है। सभी रचनाकार एवं पत्रिका के सुन्दर प्रकाशन के लिए संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं। विशेषतः श्रीमती प्रीति सिंह द्वारा अनुवादित “भात”, श्री विपुल कुमार साव द्वारा लिखित “एक मौन आदर्श”, श्री प्रशांत कुमार द्वारा रचित कविता “द्रौपदी के शब्द” बहुत ही सराहनीय एवं विचारणीय है। पत्रिका की निरंतर प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए इस कार्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

प्रधान निदेशक लेखापरीक्षा (केंद्रीय) चेन्नै का कार्यालय

लेखापरीक्षा भवन, 361, अण्णा सालै, तेनामपेट, चेन्नै - 600 018

पत्रिका का कलेवर अत्यंत मनमोहक है। पत्रिका को अक्ल बनाने में इसमें समाविष्ट सभी रचनाओं विशेषतया –“राष्ट्रवाद और एकता की भावना”, “संसार की ओर लौटने की यात्रा”, “प्रकृति के प्रति हमारी जिम्मेदारी”, “बदलेगी ये दुनिया”, “क्योंकि इंसान भी बदलते हैं”, आदि की विशेष भूमिका है। पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु बधाई एवं उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएं।

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा), उत्तराखण्ड,

‘महालेखाकार भवन’, कौलागढ़, देहरादून - 248195

आपके कार्यालय द्वारा प्रेषित “सोनार बांग्ला” के 14वें अंक की एक प्रति की प्राप्ति हुई है। पत्रिका का आवरण पृष्ठ बड़ा ही आकर्षक बना है एवं पत्रिका में निहित सभी रचनाएँ अत्यंत ही उच्चतर श्रेणी की हैं। पत्रिका के सफल सम्पादन एवं प्रकाशन हेतु सम्पादक मण्डल को हार्दिक बधाई तथा पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ।

प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) झारखण्ड का कार्यालय, राँची - 834002

पत्रिका में समाहित सभी रचनाएं सुरुचिपूर्ण, ज्ञानवर्धक एवं मनोरंजक हैं। ‘क्षीण होते रिश्ते’, ‘मानसिकता’, ‘हर्ष’, ‘संसार की ओर लौटने की यात्रा’, ‘प्रकृति के प्रति हमारी जिम्मेदारी’, ‘पुरुषार्थ’, ‘हम अबला नहीं’, ‘जिंदगी: एक परिचय’ आदि रचनाएं विशेष रूप से सराहनीय हैं। रचनाओं के बीच सम्मिलित विभिन्न प्रकार के चित्र आकर्षक एवं अतिसुंदर हैं। पत्रिका के कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं। पत्रिका के उत्तरोत्तर प्रगति के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

कार्यालय महालेखाकार (लेखापरीक्षा) हरियाणा,

प्लॉट नं. 5, सैक्टर 33-बी, दक्षिण मार्ग, चण्डीगढ़ - 160 020

‘सोनार बांग्ला’ पत्रिका के 14वें अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। इस पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं ज्ञानप्रद, मनोरंजक तथा रुचिकर हैं। ‘सोनार बांग्ला’ पत्रिका की रचनाएँ जीवन के विभिन्न स्वरूपों का आकर्षक और विचारपूर्ण दृश्य प्रस्तुत करती हैं। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं के रचनाकारों और सफल संपादन हेतु संपादक मंडल को बधाई तथा पत्रिका के उत्तरोत्तर प्रगति हेतु इस कार्यालय की ओर से शुभकामनाएं।

वित्त व संचार लेखापरीक्षा कार्यालय, सी-स्कंध चौथी मंजिल,

बीएसएनएल प्रशासनिक भवन, जुहू तारा रोड, सांताक्रूज (प), मुंबई - 400054

पत्रिका के आवरण पृष्ठ पर छायांकित छायाचित्र एवं अन्य कार्यालयीन गतिविधियों से संबन्धित छायाचित्र काफी अच्छे लगे। संकलित समस्त लेख एवं रचनाएँ सरस एवं पठनीय हैं। विशेषकर श्रीमती ओलिभ बारा का लेख “क्षीण होते रिश्ते”, श्रीमती प्रीति सिंह द्वारा अनुदित कहानी “भात”, श्री अमरेश कुमार का लेख “पर्यावरण संकट”, श्रीमती गुंजा कुमारी की कविता “हर्ष”, श्रीमती स्नेहलता की कविता “पुरुषार्थ” एवं श्री विशाल मंडल की कविता “प्रहरी” आदि काफी रोचक एवं उल्लेखनीय हैं। पत्रिका के कुशल सम्पादन हेतु हार्दिक बधाइयाँ। कार्यालय परिवार पत्रिका की अविरल प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है।

कार्यालय महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)-प्रथम उ.प्र.,

इलाहाबाद, 20, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद - 211001

उपरोक्त संदर्भित पत्र के साथ आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका “सोनार बांग्ला” के 14वें अंक की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका की यह प्रति भेजने हेतु आपका हार्दिक आभार। भेजी गई पत्रिका में संकलित सभी रचनाएँ पठनीय, रुचिकर एवं प्रेरणादायक हैं। इस पत्रिका में सामाजिक जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर प्रेरक एवं ज्ञानवर्धक लेख लिखे गए हैं। पत्रिका की साज-सज्जा एवं आवरण पृष्ठ अत्यन्त आकर्षक एवं मनमोहक है। राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में यह पत्रिका महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। सभी रचनाकारों एवं संपादक मण्डल को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए बधाई एवं उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभकामनाएँ।

भारतीय लेखा एवं लेखापरीक्षा विभाग, कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा), छत्तीसगढ़,

रायपुर, पोस्ट-मांढर, जीरो प्वाइंट, रायपुर - 493 111

आपके कार्यालय की गृह पत्रिका “सोनार बांग्ला” के 14वें अंक की प्रति प्राप्त हुई, सहर्ष धन्यवाद। पत्रिका में सभी लेख, कविताएं, आदि रोचक पठनीय एवं ज्ञानवर्धक है। सभी रचनाकार उत्तम स्तर की रचनाएं लेखन के लिए बधाई के पात्र है। पत्रिका का प्रत्येक पृष्ठ यदि विविध रंगों में रंगा होगा तो पत्रिका का स्वरूप और भी निखर कर आएगा। “पत्रिका के मुख पृष्ठ पर कोलकाता स्थित विभिन्न कार्यालयों के चित्र, जिसमें मा. उच्च न्यायालय का भी चित्र सम्मिलित है बहुत ही सुंदर है। पत्रिका का मुख पृष्ठ पत्रिका की आभा में वृद्धि करता है। पत्रिका के अंतिम भीतरी पृष्ठ पर महादेवी वर्मा जी और बाहर की तरफ श्रीमती कादंबिनी गांगुली जी का संक्षिप्त परिचय दिया हुआ है वह निसंदेह पाठकों के ज्ञान में वृद्धि करता है”। पत्रिका में हिन्दी पखवाड़े के दौरान विमोचन और अन्य चित्रों आदि ने पत्रिका को और भी निखारा है। पत्रिका के माध्यम से कल्याण अनुभाग द्वारा संचालित गतिविधियों की भी जानकारी मिली, जो निसंदेह सराहनीय है। कार्यालय पत्रिका निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर होती रहे, इन्हीं शुभ-कामनाओं के साथ अगले अंक की प्रतीक्षा रहेगी। पत्रिका के सफल संपादन तथा प्रकाशन हेतु संपादक मंडल को बहुत-बहुत बधाई एवं पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

**भारतीय लेखापरीक्षा तथा लेखा विभाग,
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) जम्मू व कश्मीर, और लद्दाख, जम्मू - 180001**

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्रिका “सोनार बांग्ला” के 14वें अंक की एक प्रति प्राप्त हुई, एतदर्थ धन्यवाद। पत्रिका में समाहित सभी रचनाएं उच्च कोटि की अत्यंत रोचक, ज्ञानवर्धक, मनोरंजक एवं सराहनीय हैं। जिनमें सुश्री सुदेश कुमारी जी की रचना “मानसिकता”, सुश्री ओलिभ बारा जी की रचना “17वां लोकसभा चुनाव 2019”, सुश्री गुंजा कुमारी की रचना “हर्ष” एवं श्री प्रभात कुमार जी की रचना “प्रकृति के प्रति हमारी जिम्मेदारी”, विशेष रूप से प्रशंसनीय रचनाएं हैं। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना सहित प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों एवं संपादक मंडल को हार्दिक शुभकामनाएं।

**भारतीय लेखा तथा लेखापरीक्षा विभाग,
कार्यालय - महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) ओडिशा: भुवनेश्वर - 751001**

पत्रिका का आवरण पृष्ठ, कलेवर एवं साज-सज्जा स्वतः ही ध्यान आकर्षित करते हैं। राजभाषा हिंदी के विकास में योगदान स्वरूप इस पत्रिका में समाहित सभी रचनाएं न केवल उच्चकोटि, ज्ञानवर्धक व पठनीय है बल्कि सामाजिक पक्षों से जुड़े कई संदेश भी देते हैं। प्रकाशित रचनाओं में श्रीमती प्रीति सिंह जी की ‘भात’, श्रीमती सुदेश कुमारी जी की ‘मानसिकता’, श्री संजय कुमार जी की ‘बदलेगी ये दुनिया’ एवं श्री अरुण विकास जी की ‘ये राहें’ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पत्रिका के उत्तम संपादन के लिए संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं। पत्रिका के सतत प्रकाशन और इसके उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओं सहित।

**कार्यालय महा निदेशक लेखापरीक्षा (पर्यावरण एवं वैज्ञानिक विभाग), कोलकाता शाखा,
द्वितीय बहुतलीय कार्यालय भवन, छठा तल, निजाम पैलेस, 234/4,
ए.जे.सी. बोस रोड, कोलकाता - 700 020**

आपके कार्यालय द्वारा प्रेषित वार्षिक हिंदी पत्रिका “सोनार बांग्ला” के 14वें अंक की प्राप्ति हुई है। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं ज्ञानवर्धक एवं रोचक हैं। पत्रिका का आवरण पृष्ठ एवं पत्रिका में प्रकाशित छायाचित्र अत्यंत आकर्षक और मनमोहक है। साथ-ही पत्रिका का कलेवर भी अत्यंत आकर्षणीय है। कविताएं एवं लेख भी भावपूर्ण, सार्थक तथा मन को छू लेने वाली हैं। आशा करता हूँ कि पत्रिका की गुणवत्ता एवं रचनात्मकता में उत्तरोत्तर प्रगति जारी रहेगी। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य तथा आगामी अंकों के लिए बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

**कार्यालय प्रधान महालेखाकार, लेखापरीक्षा-II, पश्चिम बंगाल,
सी.जी.ओ. कम्प्लेक्स, डी.एफ.ब्लॉक, साल्टलेक, कोलकाता- 700 064**

महामारी की समस्याओं के बीच प्रसन्न रहने की कला



प्रसन्न रहना मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्ति है। प्रसन्नता प्रकृति का अनमोल वरदान है। खासकर विपत्ति या दुख के समय जो मानव धैर्यपूर्वक स्थिति का सामना कर अपनी मनोस्थिति को साम्य अवस्था में रखता है वह वस्तुतः एक आदर्श के रूप में उदाहरण बन जाता है। वर्तमान कोरोना महामारी का कहर पूरे विश्व पर छाया हुआ है। सारा मानव समुदाय महामारी के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव से बुरी तरह प्रभावित हुआ है। इस महामारी ने वैश्विक स्तर पर कोहराम मचा रखा है। एक अनुमान के अनुसार पूरे विश्व में कोरोना महामारी ने 12 करोड़ से ज्यादा इंसानों को संक्रमित किया है एवं करीब 27 लाख लोगों की जान ले चुका है। लेकिन इतना कुछ होने के बावजूद इस महामारी को सभी इंसानों ने हँसते-मुस्कुराते हुए झेला है। 'भविष्य के प्रति आशा' एवं 'हर आने वाला कल मंगलमय हो'- इस उदात्त भावना को अंगीकार करते हुए हमें महामारी जैसी समस्याओं के बीच भी काफी धैर्यपूर्वक, शान्ति से एवं प्रसन्नतापूर्वक मानवीय गतिविधि को सुचारु रूप से जारी रखने हेतु कृतसंकल्प होना होगा, जिससे इतिहास में मानव की अटूट इच्छाशक्ति एवं प्रकृति के प्रति सौंदर्यबोध को स्थान मिल सके। इतिहास गवाह है कि मानव सभ्यता आज तक भीषण संग्राम, मार-काट, आगजनी, भूकम्प, महामारी जैसी बड़ी-बड़ी आपदाओं को सहज झेलते हुए आगे बढ़ते गई है। मानवीय सभ्यता ने इन विपत्तियों एवं चुनौतियों के सामने कभी घुटने नहीं टेकें हैं। सिर्फ आवश्यकता है एक स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाने की, जिससे हम महामारी के बीच भी प्रसन्न रह सकें। प्रसन्न रहने की कला विकसित करने के लिए कुछ आधारभूत उपाय अपनाने चाहिए जिससे न सिर्फ शरीर में बल्कि मस्तिष्क में भी उर्जा व आनंद का ज्वार हर समय हिलौर ले सके।

इसके लिए जीवन शैली, मानवीय चिन्तन एवं दृष्टिकोण को बदलना निहायत जरूरी है। सिर्फ लच्छेदार प्रवचन या ज्ञान की पुस्तक पढ़कर मनुष्य ज्यादा दिन तक प्रसन्न नहीं रह सकता है, खासकर महामारी जैसी समस्याओं के उपस्थित होने पर। इसके लिए सटीक कर्म के साथ बुद्धि एवं मन को उच्च विचारों से निरंतर प्लावित करना होगा। आज मानव समाज के अस्तित्व को चुनौती देने के लिए महामारी ने कमर कस ली है। इसके प्रत्युत्तर में मानव समाज का दायित्व है कि वे इस भीषण महामारी से न सिर्फ डटकर मुकाबला करे अपितु हृदय से आन्तरिक प्रसन्नता का निरंतर आस्वादन करते हुए होंठों पर प्रेम व स्नेह की मुस्कान बिखेरें। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए कतिपय उपाय सुझाए गए हैं जो निम्नवत हैं -

1. अपनी दिनचर्या को व्यवस्थित करें :-

हमारे पूर्वजों द्वारा ब्रह्ममुहूर्त में निद्रा त्याग कर प्रकृति के शान्त एवं मनोरम दृश्य का आनंद लेने का सुझाव आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना आज से 500 वर्ष पूर्व था। लेकिन वर्तमान युग में टीवी, मोबाइल, इंटरनेट एवं आधुनिक जीवन शैली ने मानव की दिनचर्या को बुरी तरह तहस-नहस कर दिया है। रात में देर तक जागना और सुबह विलंब से नींद त्यागना - यह आम प्रचलन हो गया है। जिससे मानव प्रकृति के साथ सहयोग के स्थान पर संघर्ष एवं विरोध की स्थिति में आ गया है। इसका सबसे बड़ा प्रभाव मानव के स्वास्थ्य पर पड़ा है। आज उच्च रक्तचाप, मोटापा, हृदय रोग, मस्तिष्क रोग, चिड़चिड़ापन आदि बीमारियों ने अधिकांश लोगों को ग्रसित किया है। आधुनिकता के नाम पर दिखावा, फैशन, रेस्तेरेंट-बार में खान-पान, नाच-गान आदि व्यसन ने मानव की सूक्ष्मतम भावना को कुचल कर रख दिया है। अतः आवश्यकता है कि हम सूर्य-चन्द्रमा का उदाहरण अपनाते हुए अपनी दिनचर्या को

नियमित करें, जिससे मन एवं तन में हर समय प्रसन्नता का ज्वार उमड़ता रहे। स्वास्थ्य मानव का सबसे बड़ा मित्र है, अतः इसे बनाए रखने के लिए नियमित सोना-जागना, संतुलित खान-पान, सक्रिय जीवन कार्यविधि आदि आवश्यक है। इससे महामारी में भी अपनी इम्यूनिटी बढ़ाने में मदद मिलेगी एवं स्वभावतः प्रसन्नता रूपी कमल खिलता रहेगा।

II. नियमित रूप से प्रार्थना एवं व्यायाम करें :-

आप चाहे कोई धर्मावलम्बी भी हों, प्रार्थना वो भी अगर शुद्ध हृदय से की जाए तो इसका आश्चर्यजनक प्रभाव होता है। संसार के बड़े-बड़े संत, ज्ञानी, वैज्ञानिक, शोधकर्ता सभी ने ईश्वर के समक्ष निष्काम भाव से प्रार्थना के महत्व को स्वीकार किया है। प्रार्थना हमारे मन के मैल को साफ करती है, दुर्गुणों को झाड़ू की तरह सफाई कर निकालती है, आनंद की वृद्धि करती है, शान्ति व धैर्य प्रदान करती है एवं हमें मानव से देवत्व की ओर ले जाती है। अतः किसी भी काल में, कहीं भी, ईश्वर से मानवहित के लिए सार्वभौम सुख व शान्ति एवं अक्षय आनंद के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। यह एक दिव्य औषधि है। इससे निश्चित रूप से प्रसन्नता की लहरें हर प्रार्थी के मन मस्तिष्क में उमड़ेगी। आधुनिक जटिल जीवन शैली में प्रत्येक व्यक्ति चाहे बड़े हो या छोटे, सभी को नियमित रूप से अपनी शारीरिक क्षमता के अनुसार प्रकृति के खुले आंगन में व्यायाम करना चाहिए। योगासन व प्राणायाम अगर किया जाए तो और भी अच्छा है जिससे शरीर व मन दोनों तन्दुरुस्त होते हैं। एक स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है - इस अवधारणा को अंगीकार करते हुए अगर नियमित रूप से प्रार्थना एवं व्यायाम को जीवन में शामिल किया जाए तो हर समस्या चाहे वो महामारी हो वो कोई अन्य प्राकृतिक आपदा, बिलकुल आसान हो जाती है। हम आनंद में हर क्षण जीवन बिताते हैं।

III. अपने खान-पान पर ध्यान दें :-

वर्तमान महामारी ने आधुनिक जीवन शैली एवं खान-पान पर करारा आघात किया है। हमें सोचने के लिए विवश कर दिया है कि शरीर की रोग निरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए कौन सा आहार उपयुक्त होगा। हमें भोजन में आनंद प्रदान करने वाली आहार सामग्री शामिल करनी होगी - जिससे हमारा पाचन तंत्र सुदृढ़ हो, रोग निरोधक क्षमता का विकास हो एवं मस्तिष्क परिष्कृत हो यथा - ताजे फल, दूध, दही, साग, सब्जी, तरह-तरह के अन्न। एक पुरानी कहावत है - जैसा अन्न, वैसा मन। अतः शुद्ध, सात्विक आहार का सेवन आज इस महामारी के दौर में अत्यंत प्रासंगिक है जिससे न केवल शरीर निरोग रहेगा अपितु पर्यावरण की भी रक्षा होगी। अन्ततः ऐसा आहार हमारी चेतना को परिष्कृत कर एक अखंड आनंद प्रदान करेगा।

IV. स्वार्थ का यथा संभव त्याग करें एवं प्रकृति व मानव हित के लिए कार्य करें :-

आज का युग गलाकाट प्रतियोगिता का है। सभी एक दूसरे को दबाकर, कुचलकर उपर उठने के प्रयास में लगे हुए हैं। पर्यावरण के महत्व को हम क्रमशः भूल रहे हैं। पर्यावरण प्रदूषण दिनों दिन बढ़ रहा है। इसके लिए मानव की अपूरणीय इच्छा जिम्मेदार है। वैश्विक हित की बात कोई व्यक्ति व राष्ट्र नहीं सोच रहा है, जिससे नाभिकीय युद्ध का खतरा बढ़ रहा है। अतः उपर्युक्त स्वार्थ परक प्रकृति को त्याग कर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को आत्मसात करते हुए हर मानव समुदाय का कर्तव्य है कि वे क्षुद्र स्वार्थ से ऊपर उठकर मानवीय हित के वृहत्तर उद्देश्य के लिए कार्य करें। इससे जन-जन में आनंद का स्त्रोत उमड़ने लगेगा। उपर्युक्त पहलुओं को ध्यान में रखते हुए अगर हम अपनी जीवन शैली को सही दिशा में मोड़ सकें तो महामारी जैसी समस्याओं के बीच भी हम प्रसन्न रहने की कला विकसित कर सकते हैं।

मनोज कुमार मोवार
कल्याण अधिकारी

रशिया डायरी

(एक संगीतकार के घर में बगैर किसी योजना के और एक अनाम संगीतज्ञ से साक्षात्कार)



"आप लोग गोल्डनवाइजर के मेमोरियल प्लेट से शुरुआत कर सकते हो। इसी गली में अगली इमारत में है।"

दरवाजे पर सुबह गार्ड बदल गई थी। ये नई गार्ड भी लाडा की तरह ही लंबी और मजबूत कद-काठी की महिला थी। विशेषकर उसकी हथेलियां बहुत असामान्य ढंग से लंबी और चौड़ी थीं। पर उसके चेहरे के भाव लाडा की अपेक्षा शांत और घने थे - बहुत हद तक उसकी देह से बेमेल से।

"मैं सब पर्यटकों को इसके बारे में बताती हूँ पर शायद ही कोई वहां जाता है। मॉस्को बहुत बड़ा है और पर्यटकों के पास दो या तीन दिन ही होते हैं। लेकिन रेड स्क्वेयर, क्रैमलिन, बॉलशाय थिएटर, स्पेस म्यूजियम के अलावा भी बहुत मॉस्को है, बहुत कुछ बच जाता है। अगर संगीत में आपकी दिलचस्पी है तो आपको वहां जाना चाहिए।"

हालांकि मैं अंजु को सबसे पहले 'इलिस्वस्की स्टोर' ले जाना चाहता था। बीती शाम मैं वहां खाने-पीने की चीजें लेने गया था और उसके अंदरूनी स्थापत्य से बहुत प्रभावित हुआ था। लेकिन हम दोनों ने ही उसके उस अनौपचारिक आग्रह के प्रति एक नैतिक दायित्व महसूस किया था जिसने बहुत जल्दी ही मेरे भीतर एक किस्म की जिज्ञासा की शकल ले ली थी। यूरोपियन क्लासिकल संगीत के प्रति मेरे भीतर सदा ही विशेष आकर्षण रहा है।

उसने ठीक कहा था - दो या तीन दिन ही पर्यटक का सच होता है। इस सीमित समय में वो उसको पकड़ना चाहता है जिसे सब जानते हैं, जो शहर की खुली पहचान है - सबूत की तरह। लेकिन निर्धारित योजना से बाहर के अन्जान चेहरों से परिचय का अपना ही कौतूहल है, रहस्य है, उपलब्धि है। आज इन पंक्तियों को लिखते वक्त मैं कह सकता हूँ कि यात्राओं के दो हिस्से होते हैं - पहला, दूसरों के लिए और दूसरा, सिर्फ अपने लिए। अपनी यात्राओं में मैंने महसूस किया है कि जो सबके लिए सबूत होता है वो खुद के लिए नहीं होता (या ऐसा होना जरूरी नहीं है)। हम इमारतों, रास्तों, शहरों की एक समग्र तस्वीर, एक निश्चित स्पॉट से एक प्रतिनिधि तस्वीर खींच सकते हैं। लेकिन इमारतों-रास्तों-शहरों में सब कुछ ऐसा नहीं होता जिसकी तस्वीर ली जा सके पर आँखों के लिए वो किसी चमत्कार से कम नहीं होता। क्या हम संगीत सुनते हुए खुद की तस्वीर ले सकते हैं - ऐसी तस्वीर जिसमें हमारा आनंद भी पकड़ा जाए और संगीत की शकल भी! इसी तरह शहरों-

इमारतों-रास्तों के पास भी अपना संगीत होता है जो सिर्फ आपके लिए होता है। आप उसकी धुन गुनगुना सकते हैं लेकिन वो दूसरे को पूरी तरह समझ में आ जाए - ऐसी बाध्यता नहीं होती।

अलेक्जेंडर गोल्डनवाइजर मेमोरियल प्लैट कुछ इसी तरह की जगह थी।

वे सोवियत-रशियन पिआनिस्ट थे।

इस इमारत में भी वैसी ही खामोशी और सूनापन था। म्यूजियम चौथे तल पर था। सीढ़ियां-लिफ्ट-कॉरिडोर सब खाली। द्विशा और प्रांजल की हँसी कॉरिडोरों के घने जाल में गूँजती-सी घुसती, गुम हो जाती और अगले कॉरिडोर के मुहाने पर फिर हमसे आ मिलती। धुंधले लंबे कॉरिडोरों में किसी एक दरवाजे के भीतर म्यूजियम था ... और फिर हम उसके सामने थे। प्लैट नंबर - 110। बाहर रशियन भाषा में एक बोर्ड लगा था - शायद म्यूजियम का नाम। एक पोस्टर भी था। 'शायद यही गोल्डनवाइजर होंगे!' - अंजु ने कहा।

कॉरिडोर के अंत पर लोहे की बड़ी खिड़की थी। उसके एक खुले हिस्से से हवा आ रही थी। अंधरे में गुंथी ठंडी विरक्ति-सी चारों ओर पसरी थी। पर मैं अपने भीतर बहुत आश्वस्त था। मैं जानता था कि दरवाजे के इस ओर का ये शोक-चित्र दरवाजे के भीतर निश्चित रूप से नहीं होगा। साहित्यकारों के मकानों की अपेक्षा संगीतकारों के मकानों के लिए मैं सदा ही बहुत आश्वस्त रहता हूँ। वे लगभग हमेशा ही बहुत ज्यादा कलात्मक और संप्रेषणीय होते हैं। सबसे बढ़कर, बहुत अनिवार्य रूप से एक प्रकार की सकारात्मक ऊर्जा से भरे रहते हैं।

भीतर ऐसा ही था।

वो कुछ-कुछ विक्टोरियन शैली-सी अंतर्सज्जा थी। गोल्डन ब्राउन लकड़ी का फर्नीचर, सफेद दीवारों पर छोटे-बड़े असंख्य फोटो फ्रेम-कोलार्ज-पेंटिंग, चमचमाते झूमर, पोर्सिलीन के दूधिया स्कल्पचर, गोल्डन-सिल्वर शो-पीस, बड़ी अलमारियों में गिल्डेड किनारों की ढेर-सी किताबें, घनी कारीगरी वाले लाल कालीन, थियेटरिकल भारी हरे पर्दे और चार ब्लैक पॉलिश पियानो।

पियानो के धीमे स्वर भी पीले उज्ज्वल प्रकाश में प्रवाहित थे। वे शायद स्वयं गोल्डनवाइजर की ही धुनें थी।

"क्या किसी कलाकार का जीवन इतना भव्य भी होता है!!" - अंजु की आवाज में आश्चर्य था। वो अभिभूत-सी चारों तरफ देख रही थी।

"संगीतकारों का तो होता है।" - मैंने हंसकर कहा।

कलाकारों के घर उनकी आत्मकथा सरीके होते हैं। लगभग आधे घंटे में ही हम गोल्डनवाइजर के बारे में काफी कुछ जान गए थे। वे बीसवीं सदी के पूर्वार्ध के सर्वश्रेष्ठ पियानोवादकों में से एक थे। अपने विद्यार्थी जीवन में वे मास्को कंजरवेटरी से पियानो आर्ट में गोल्ड मेडलिस्ट थे और बाद में वहीं पियानो प्रोफेसर भी नियुक्त हुए थे। 'रशियन म्यूजियम आफ म्यूजिक' के संगठन और विकास में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। संगीत के अलावा साहित्य, चैस, पेंटिंग तथा ऑटोग्राफ कलेक्शन में वे विशेष रुचि रखते थे। म्यूजियम में उनकी ऑटोग्राफ कलेक्शन प्रदर्शित की गई थी जिसमें उनके समकालीन 63 साहित्यकारों, संगीतज्ञों एवं अन्य लोगों के ऑटोग्राफ थे (उनमें से 20 म्यूजिकल ऑटोग्राफ थे)। अपने समय के लगभग सभी सर्वश्रेष्ठ रूसी सम्मानों से समादृत हुए थे। ... और वे टॉलस्टॉय के घनिष्ठ मित्र थे। दीवारों पर उन दोनों के बहुत से चित्र थे। उनमें से अधिकांश टॉलस्टॉय के यास्नाया पोल्याना स्थित आवास पर लिए गये थे। 'वॉलिजी टालस्टागो' नाम से उन्होंने उन दोनों के संबंधों पर आधारित संस्मरण पुस्तक भी लिखी थी जिसकी मूल प्रति म्यूजियम में रखी गई थी।

वर्तमान में इस म्यूजियम का लक्ष्य पर्यटकों से ज्यादा विद्यार्थी थे। संगीत के विद्यार्थियों का मार्गदर्शन और म्यूजिकल लेक्चर इसकी प्रमुख गतिविधि थी। 1961 तक स्वयं गोल्डनवाइजर यहां गाइड और लेक्चरर के रूप में उपस्थित रहते थे। उनकी मृत्यु के बाद उनकी शिष्या और पत्नी ने 1998 तक यह काम संभाला था।

वो चार कमरों का अपार्टमेंट था। स्टडी और डाइनिंग रूम के अलावा एक छोटा कंसर्ट हॉल भी था। वहां एक वृद्ध सज्जन पियानो पर बैठे थे। म्यूजियम में प्रवाहित स्वर उन्हीं के पियानों से उठ रहे थे। हम लोग खिड़की के पास बैठ गए। कंसर्ट हॉल की खिड़कियां ट्रैवरस्काया स्ट्रीट (सड़क) पर खुलती थी। खिड़की के शीशे के बाहर इलिस्वस्की स्टोर की 'विंटेज' गुलाबी इमारत दिखती थी। उसके आगे पुश्किनस्काया स्क्वायर था। पर सड़क पर विरानी-सी थी। पियानो के स्वर जैसे मेरी आंखों से होते हुए खाली सड़क और दूर खड़े पुश्किन की काली प्रतिमा पर सूखे पीले पत्तों-से झड़ रहे थे। भीतर गर्माहट के बावजूद बाहर की पैनी सर्दी महसूस होती थी। लेकिन इसके विपरीत अंजु का चेहरा पियानो के उस धीमे उदास स्वर पर भी गिली-सी उष्मता से भरा जाता था। वो मुस्कुरा रही थी। निश्चित रूप से वो एक खास किस्म का एहसास था। शायद कुछ पूरा हो जाने ...कुछ मिल जाने का।

द्विशा मेरी गोद में सो गई थी और प्रांजल एकटक बहुत शांत उत्सुकता से पियानो पर नृत्य करती अंगुलियों को देख रही थी।

काफी देर बाद जब वे रुके तो उनसे बात हुई लेकिन गोल्डनवाइजर से ज्यादा दूसरी बहुत सारी चीजों के बारे में। पर उससे पहले उन्होंने हमें गोल्डनवाइजर की स्टडी में कॉफी के लिए आमंत्रित किया था। म्यूजियम में हमारे अलावा और कोई नहीं था - न तो पर्यटक, न ही विद्यार्थी। शायद इसलिए वे इसकी छूट ले सकते थे।

गोल्डनवाइजर, चाइकोवस्की, शोस्ताकोविच, 'दी फाइव' (पांच रूसी संगीतज्ञों का समूह जो प्रचलित यूरोपीय संगीत मॉडलों की नकल करने की जगह विशिष्ट एवं मौलिक रूसी शास्त्रीय संगीत के सृजन हेतु समर्पित था) के बाद स्ट्राविंस्की के अनायास जिक्र पर वे शायद स्वयं से ही खिन्न हो गए।

"उन दिनों अमेरिका हमारा दुश्मन था। पर वैश्विक कलाविदों का मानना था कि वो सिर्फ राजनीतिक शत्रुता थी। कला उससे मुक्त थी।" उनकी धीमी और शांत वृद्ध वाणी में भी कुछ तनाव से खींच आया था और मैं समझने की कोशिश कर रहा था कि क्या वो व्यंग्य था?

"वायजर गोल्डन रिकॉर्ड में उनके नासा ने स्ट्राविंस्की को रखा था ... लिखा था - दी राइट ऑफ स्प्रिंग, इगोर स्ट्राविंस्की, सोवियत यूनियन/यू.एस.ए। 'टाइम' के लिए तो यह बहुत बड़ा सबूत था - अमेरिका की दरियादिली और मासूमियत का।"

वे कुछ क्षण रुके। नीले सोफे के हैंडरेस्ट पर उनकी अंगुलियां धीमे-धीमे नाचने लगीं। उनके पीछे दीवार पर टॉलस्टॉय थे - ब्लैक एंड वाइट तस्वीर में भी चमक से भरे हुए। हवा में अब चोपिन की नॉक्टन भर गई थी - ऑपस 9, सं. 2। गोल्डनवाइजर ने बिथोवन, मोजार्ट, चोपिन, इत्यादि को 'रीक्रिएट' किया था। मैं उस धुन को पहचानता था। हालांकि नॉक्टन रात का संगीत होता है, पर रात क्या सिर्फ एक रंग है!! उस दिन मॉस्को में निश्चित रूप से दिन नहीं था।

वे फिर से कहने लगे। लेकिन इस बार उनकी आवाज में तटस्थता थी - एक कहानीकार की-सी तटस्थता।

"हमें दोनों देशों के नाम एक साथ आने पर अफसोस नहीं था। शायद हमने इसको इतना महत्व भी नहीं दिया था। लेकिन स्ट्राविंस्की? रूसी संगीत का प्रतिनिधि चेहरा? ये अफसोसजनक था। प्रत्येक वो व्यक्ति जो रूसी था और जिसने अमेरिका में शरण ली थी, वो उनकी नजर में हमारी उपलब्धि था। स्ट्राविंस्की, राचमानिनोव ... और भी न जाने कितने नाम। उन्होंने बोरोडीन, चाइकोवस्की या मायकोवस्की को नहीं चुना, बल्कि स्ट्राविंस्की को जगह दी जिसका संगीत अटपटे परीक्षणों और सूखी 'मेकअप' सुंदरता से भरा है।"

वे फिर रुके लेकिन इस बार ज्यादा देर के लिए नहीं।

"आमतौर पर जवानी में हम जिन बातों, घटनाओं, व्यक्तियों से अपने गर्म खून और नासमझ जोश के कारण असहमति रखते हैं और बहुत परेशान होते हैं, बुढ़ापे की परिपक्व दृष्टि और परिस्थितियों की बेहतर समझ में हम उनसे एक तरह की संधि कर लेते हैं और फिर वे हमें परेशान नहीं करते। लेकिन स्ट्राविंस्की से मैं आज भी कोई संधि नहीं कर पाया हूँ। अब मैं उनका विरोधी नहीं हूँ, बस उसके संगीत से असहमत हूँ। क्या आपने सुना है वो - दी राइट ऑफ स्प्रिंग? आप खुद अंदाजा लगा सकते हैं कि उसमें कितना ऊपरी प्रयास है...भीतर का कुछ नहीं।"

मैंने ना मैं सर हिला दिया। मैंने न तो स्ट्राविंस्की को सुना था, न ही वायजर गोल्डन रिकॉर्ड के बारे में कुछ जानता था। पर ये मैंने उनको बताया नहीं। लेकिन उनकी आगामी बातों ने मुझे बहुत हैरान किया। मुझे बहुत तीव्र एहसास हुआ कि मैं कितना कम जानता हूँ ... कि हम अपने जीवन के अधिकांश हिस्से में अपनी रुचियों की ऊपरी सतह भर पर ही तैरते और तृप्त होते रहते हैं, भीतर के गहरे गोते नहीं लगाते।

"उसमें (रिकार्ड में) आपकी आवाज भी तो है। हालांकि मुझे वो गीत समझ में नहीं आता - गीत या राग जो भी आप कहते हैं। लेकिन आवाज समझता हूँ। वो निश्चित रूप से इंटरस्टेलर स्पेस के लिए सबसे बेहतरीन विकल्प है। जैसे वो आवाज स्पेस के अंतहीन शून्य का संगीतिक रूप है।"

(नासा ने 1977 में इंटरस्टेलर स्पेस में नवीन जीवन की खोज में दो मानवरहित अंतरिक्षयान भेजे थे जिनका नाम वायजर 1 और 2 था। वायजर एक में गोल्डन रिकॉर्ड (सी.डी) भी था जिसमें पृथ्वी की पहचान बताने वाली प्रतिनिधि तस्वीरें, आवाजें और संगीत रखा गया था। संगीत श्रेणी में संपूर्ण विश्व से कुल 27 आर्टिकल थे। भारत से केसरबाई केरकर की भैरवी "जात कहां हो" को शामिल किया गया था।)

गोल्डनवाइजर और टॉलस्टॉय के संबंधों के बारे में पूछने पर वे बहुत सहज ढंग से उस ओर आ गए।

"...दोनों में 47 साल का अंतर था। यह निश्चित रूप से कला का कला के प्रति सम्मान और प्रेमभाव था। इसका श्रेय टॉलस्टॉय को ही जाना चाहिए। वे बहुत बड़ी शख्सियत हो चुके थे और गोल्डनवाइजर शुरुआत कर रहे थे। टॉलस्टॉय के सान्निध्य ने उनको दार्शनिक संगीतकार के रूप में स्थापित किया। गोल्डनवाइजर के पियानो निर्देशन पर भी टॉलस्टॉय का प्रभाव था। मास्को कंजरवेटरी में अपनी कक्षाओं में वे टॉलस्टॉय का उल्लेख किया करते। उनके कुछ विद्यार्थियों ने अपने प्रिय अध्यापक से संबंधित संस्मरणों में इसका वर्णन किया है। मैं आपको दिखाता हूँ।"

उन्होंने अपने बगल में रखी लकड़ी की भारी विंटेज आलमारी में से एक किताब निकाली। वो रशियन में थी। गोल्डनवाइजर के विद्यार्थियों और अन्य समकालीनों के संस्मरणों का संकलन था। एक विद्यार्थी लाजर बिएर्मन के लेख का हिस्सा उन्होंने अपने ढंग से पढ़कर सुनाया -

"गोल्डनवाइजर नहीं चाहते थे कि पिआनिस्ट बजाते समय बहुत ज्यादा हाव-भावों और शारीरिक भंगिमाओं का इस्तेमाल करें। इसलिए गोल्डनवाइजर अक्सर अपने छात्रों को बताया करते कि

टॉलस्टॉय ने घोड़ों की सवारी करना कैसे सीखा। ...टॉलस्टॉय अपनी जवानी में बहुत बुरे अश्वचालक थे। ... जब लेखक ने घोड़े की दैहिक गति के साथ अपनी देह की गति का पूरी तरह समन्वय स्थापित करना सीख लिया, तब ही वे घोड़े को नियंत्रित करने में सफल हुए। गोल्डनवाइजर ने कहा कि कलाकारों को भी एक अच्छे अश्वचालक की भांति होना चाहिए और अपनी शारीरिक गतियों को अपने वाद्य एवं संगीत के साथ एकीकृत करना सीखना चाहिए।"

वे बताते रहे, हम सुनते रहे। पियानो की धुनें बदलती रही। फिर एकाएक वे गंभीर हो गए - एक खुशनुमा स्मृति के बाद अचानक बहुत गंभीर।

"टॉलस्टॉय आज भी 'एक्स-कम्युनिकाडो' हैं। आप जानते हैं?"

"हाँ, 1901 की चर्च की रूलिंग।"

"हम्मम...व्यक्ति और धर्म - ये दोनों बहुत अलग हैं। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, न कि एक दूसरे से श्रेष्ठ। ये एक दूसरे पर हावी नहीं हो सकते, नहीं होना चाहिए। इसी तरह व्यक्ति का धर्म और चर्च का धर्म भी भिन्न है। आप क्या सोचते हैं?"

मुझे तुरंत कुछ नहीं सूझा। पर अंजु के पास विशेषकर इस एक विषय पर बोलने के लिए हमेशा की तरह बहुत कुछ था।

"मैं सोचती हूँ कि व्यक्ति का धर्म उस तर्क से परिचालित होता है जिसकी निष्पत्ति उसकी सहूलियत से होती है, जबकि धार्मिक संस्थाओं के पास सब कुछ होता है, बस तर्क नहीं होता। इसलिए दूसरे की मौलिकता-नवीनता की स्वीकृति भी नहीं होती। धार्मिक संस्थाएं अपनी मूल प्रकृति में सामंती मूल्यों से प्रेरित कट्टर संगठन होते हैं और व्यक्ति का मूल स्वभाव विद्रोह है। यह भी देखने वाली बात है कि धार्मिक संस्थाएं एक-दूसरे का आदर नहीं करती। वो कितना ही दिखावा करें पर सच यही है। हर धर्म अपने आराध्य को सर्वशक्तिमान बताता है लेकिन दूसरे के आराध्य से डरता है। क्या यह हँसने और अनुसंधान योग्य बात नहीं है। हर धर्म दूसरे धर्म को जहरीला नाग मानता है जो उसके अनुयायियों को निगल जाएगा ...और इस तरह हर धर्म अपनी मूल प्रकृति और दृष्टि

में व्यक्ति को मूर्ख मानता है जिसके पास अपना दिमाग नहीं है और जो बहुत सरलता से भ्रमित हो जाता है।"

"आपके देश में आपको कम्युनिस्ट कहा जाता होगा?" वे थोड़ा सा हँसे।

"कभी-कभी फेसबुक पर ... लेकिन यहां ...आपके देश में?" जवाबी मुस्कराहट के साथ अंजु ने पूछा।

"देश का तो नहीं कह सकता पर मैं इतनी आसानी से आपको कम्युनिस्ट नहीं मान सकता। चूंकि कम्युनिज्म परंपरा और संस्कृति का विरोध करता रहा है और व्यक्ति का विरोध भी अपने चारों ओर फैली जिस मान्यता, विचारधारा, प्रैक्टिस, परिस्थिति से होता है, वो एक दिन में निर्मित न होकर समय की लंबी अवधियों का परिणाम होता है और इस तरह वो भी सामाजिक इतिहास का हिस्सा होता है, इसलिए व्यक्ति के विरोध या विद्रोह को कम्युनिस्ट विद्रोह से अलग करके देखना हर किसी के लिए संभव नहीं हो पाता। धर्म का समग्रतः विरोध आपको कम्युनिज्म के निकट ले आएगा लेकिन उसके पाखंड का विरोध आपको कम्युनिस्ट नहीं बनाता। टॉलस्टॉय का विरोध चर्च से है, क्राइस्ट से नहीं। इसलिए वे कम्युनिस्ट नहीं थे।... (वे रुके) ... खैर, मेरे ख्याल से उन दोनों ने एक दूसरे को नहीं समझा - टॉलस्टॉय और चर्च ने। दोनों ही अपनी समस्त समझदारी के बावजूद एक-दूसरे की सीमाओं का अतिक्रमण करते रहे। शुरुआत टॉलस्टॉय ने की, अंत चर्च ने किया। 1901 में चर्च ने उनको धर्म से बहिष्कृत कर दिया - 'एक्स-कम्युनिकेटिड'। पर क्या टॉलस्टॉय को इससे कोई फर्क पड़ा होगा? मेरे ख्याल से नहीं। उनकी मृत्यु 1910 में हुई और उन्होंने कभी चर्च से माफी नहीं मांगी। पर एक निष्पक्ष और शांत चित नागरिक के लिए यह सारा प्रकरण बहुत परेशानी भरा है - जो अपने धर्म में भी विश्वास रखता है और टॉलस्टॉय में भी। वह दोनों जगह खुद को बंधा हुआ महसूस करता है - चर्च में टॉलस्टॉय का नाम नहीं ले सकता और टॉलस्टॉय के शब्दों में चर्च पर आक्रमण पर सहज भी नहीं रह पाता।"

"पर रशिया में तो कम्युनिज्म हावी रहा है जो ईश्वर को नकारता है। क्या फिर भी वो शांत चित नागरिक टॉलस्टॉय पर प्रतिबंध से परेशान है?" मैंने जानबूझकर ये सवाल पूछा था।

"रशिया की 55% जनसंख्या धर्म में विश्वास करती है। इनमें से 45% ईसाई हैं। लगभग 20-22% ऐसे हैं जिनका धार्मिक मत अघोषित है और सिर्फ 10% नास्तिक हैं। आप सैद्धांतिक रूप से इसी 10 % की बात कर रहे हैं। ... राजनीति ऊपर से चिपकाया हुआ टैटू है। उसके रंग कितने ही मजबूत और गहरे क्यों न हो, उनको उतारने की तकनीक सदा विद्यमान रहती है। जबकि धर्म एक भीतर की चीज है, ऊपर की नहीं - खून, टिशू, सेल की तरह। समूची दुनिया को लगता है कि रशिया में कम्युनिज्म की विफलता राजनीतिक अक्षमता और आर्थिक गिरावट का परिणाम है, लेकिन क्या

यह पूरा सच है? मेरी नजर में सच यह है कि व्यक्ति को उसकी आत्मा से अलग रखने का प्रयास किया गया। (वे रुके... झूमर को देखने लगे) ... राजनीति कभी धर्म पर हावी नहीं हो सकती। वो धर्म से सांठगांठ जरूर कर सकती है पर उसको दबा नहीं सकती। रशियन राजनीति ने तो यही सिद्ध किया है। लेनिन सहित तमाम कम्युनिस्ट नेता टॉलस्टॉय के प्रति श्रद्धा भाव रखते थे लेकिन फिर भी चर्च से उन पर लगे प्रतिबंध को नहीं हटवा पाए। ... (वे फिर रुके)... लेकिन वो 'परेशान नागरिक' कोशिश कर रहा है कि प्रतिबंध उठ जाए। 2001 में पूर्व प्रधानमंत्री और रशियन बुक यूनियन के अध्यक्ष सर्गेई स्टेपशिन ने पत्र लिखकर चर्च से टॉलस्टॉय के लिए माफी की मांग की थी। हालांकि बहुत से 'टॉलस्टॉयनों' के लिए यह मानहानि की-सी बात हो गई थी। फिर टॉलस्टॉय के पड़ पड़ पोते व्लादिमीर टॉलस्टॉय ने भी चर्च से अपने निर्णय की पुनर्समीक्षा की मांग की थी। लेकिन चर्च आज भी अपने निर्णय पर अडिग है।"

इसके बाद कुछ और बातचीत। दोनों ओर से कुछ प्रश्न, कुछ उत्तर। कुछ भारत के बारे में चर्चा। उन्होंने हमें मॉस्को के बाहर चाइकोवस्की हाउस म्यूजियम और यास्नाया पोल्याना स्थित टॉलस्टॉय हाउस म्यूजियम तक पहुंचने का रूट मैप समझाया। रशियन विशेषता 'बोर्श' और 'पेलमिनी' के लिए दो-तीन बेहतरीन रेस्तराओं का पता भी दिया। प्रांजल और द्विशा के असाधारण धैर्य पर उन्होंने आश्चर्य जाहिर किया। साथ ही अफसोस भी कि दोनों को देने के लिए उनके पास कुछ नहीं था - हॉट चॉकलेट या कैंडी।

विदा लेने से पहले मेरे मन में एक ख्याल आया था। ख्याल या नाम - अलेक्जेंडर शोल्लेज्नेत्सिन। उन्होंने भी अमेरिका में शरण ली थी और अमेरिका की उदार मानसिकता की प्रशंसा की थी विशेषकर प्रेस और अभिव्यक्ति के संदर्भों में (यद्यपि अमेरिकी पॉप कल्चर और अतिशय व्यक्तिवाद की कटु आलोचना भी की थी)।

पहले सोचा कि उनसे पूछूं, पर फिर यह सोच कर रह गया कि कहीं इससे हमारे उदार आतिथेय नाराज न हो जाए। मैं यह नहीं समझ पाया था कि स्त्राविंस्की से उनकी नाराजगी उनके बीते समय के रूढ़ रूसी कम्युनिस्ट नजरिए से प्रेरित थी जिसे स्त्राविंस्की का नाम ही अखरता था और उसके संगीत से कोई मतलब नहीं था, या वो एक संगीत प्रेमी की विशुद्ध आलोचक दृष्टि थी जिसे स्त्राविंस्की संगीत के मानदंडों पर बहुत कच्चे नजर आते थे। वस्तुतः वे खुद को बचाकर बात करने में सिद्धहस्त थे। न केवल वे बल्कि बाद में बहुत से ऐसे लोगों से बातचीत हुई जो रूस के बीते समय की त्रासदियों, उसकी वर्तमान समस्याओं, निर्वासितों, पलायनवादियों, लेनिन-स्टालिन-गोर्बाचोव-पुतिन की राजनीति पर बात करते समय खुद को बचाए रखते थे। इस तरह कि आप सीधे-सीधे

उनकी सोच-मान्यता पर कोई इल्जाम नहीं लगा सकते। एक ऐसी सिद्धहस्तता जो आतंक, दमन, विरोध, संदेह तथा भय की निरंतरता के बीच कठोर संघर्ष से व्यक्ति के भीतर पैदा होती है और फिर पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ती है।

प्रशांत कुमार
वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक



पुष्पांजलि



“एक नवजात शिशु के लिये आप लोगों से एक निवेदन, मैं पुष्पांजलि चैरीटेबल ट्रस्ट की तरफ से आप सभी से विनम्र निवेदन करता हूँ कि असहाय, दरिद्र बच्चों के लिए मानवता का हाथ बढ़ाएं, आपके एक सामान्य सहयोग से किसी नवजात की जान बच सकती है”, इतना कहते हुए उस युवक ने मेरे हाथ में एक पर्ची थमा दी। उस पर्ची में सरकारी पंजीकरण संख्या, वेबसाइट, मोबाइल नं., पैन कार्ड सं. के साथ पते का भी उल्लेख था। थोड़ा और नीचे देखा तो खाता सं., बैंक और ब्रांच का नाम लिखा हुआ था।

मुझे बड़े-बुजुर्गों की बात याद आने लगी, ‘ये सब कमाने का जरिया है, हाथ-पैर सही-सलामत रहते हुए भी न जाने क्यों ये लोग मानवता को भी व्यापार का साधन बना लेते हैं।’ ये सारे विचार मेरे मन में चल रहे थे। मैंने उस युवक को शक की दृष्टि से देखा और उस पर्ची को एक ओर रख दिया।

सहसा एक विचार कौंध गया, ‘यदि यह युवक सच में किसी चैरीटेबल संस्था से जुड़ा हो और अपने कीमती समय का थोड़ा सा वक्त इस पुण्य कार्य में लगाता है तो क्या मैं थोड़ा सा सहयोग कर उसके हौसले को बढ़ा नहीं सकती? हाँ। इतना तो मैं कर ही सकती हूँ।’ फिर मैंने उस पर्ची में छपी सहयोग राशि उस युवक को देते हुए मन ही मन कहा - “इस नेक कार्य से जुड़े हो तो तुम प्रशंसा के हकदार हो।”

मन आखिर मन होता है। मन का स्थिर होना और बहती जलधारा में किसी तिनके का अडिग होना एक सी बात है। यदि तिनका उस जलधारा में स्थिर हो भी जाता है तो हवा के हल्के से झोंके से ही वह बहने लगता है और तिनके का सारा प्रयास व्यर्थ साबित होता है। मेरी दशा भी कुछ ऐसी हो गई। पास बैठी एक भद्र महिला बोली, “तुमने बेकार में दया दिखाई, अच्छा होता कि कुछ खरीद के खा लिया होता, ये लोग तो इस पैसे से नशा करते हैं। तुमने अच्छा काम समझ कर ही पैसे दिया, लेकिन उस पैसे का इस्तेमाल गलत काम में होगा। इतने सारे लोग भी तो बैठे हैं, किसी ने उस पर्ची को पढ़ा तक नहीं और तुम हो कि तुमने एक नशेड़ी को पनपने के लिए और मदद कर दी।” उनकी बातों को सुन कर मुझे अपने किए पर पछतावा होने लगा।

फिर बहुत कोशिश करके मैंने स्वयं को उस चिन्ता से मुक्त किया। सोचा - “यदि सारे लोग ऐसे ही धोखा देते हैं और अपना उल्लू सीधा करते हैं तो फिर इतने सारे चैरीटेबल संस्थान कैसे चल रहे हैं?” इतने सारे अनाथालय, वृद्धाश्रम, बालिका गृह, इत्यादि का संचालन कैसे हो रहा है? क्या ये सारे सरकारी संस्थान हैं या फिर लोग इसके नाम से अपना रोजगार चला रहे हैं? नहीं-नहीं, ऐसा तो नहीं हो सकता! जब नाम में ही चैरीटेबल शब्द जुड़ा है तो फिर ये सरकारी संस्थान कैसे हो सकता है और यदि ये सरकारी संस्थान हैं भी तो क्या सरकारी संस्थान के नाम से लम्बे समय से कोई इस तरह से उगाही कर रहा हो और सरकार को इसकी जानकारी तक न हो? ऐसा भी संभव प्रतीत नहीं होता। बहरहाल, संसार में इतने सारे लोग इतने कष्ट से गुजर-बसर कर रहे हैं और मैं अगर कुछ देने में समर्थ हूँ तो मुझे देना चाहिए। मैं यदि व्यक्तिगत तौर पर किसी के लिए कुछ नहीं कर सकती तो इतना तो कर ही सकती हूँ कि किसी के प्रयास में सहयोग दे कर उसकी कोशिश को सफल बनाऊँ। क्या मैं इतना भी नहीं कर सकती? हाँ इतना तो जरूर कर सकती हूँ। अच्छाई की तरफ बढ़ते किसी के कदम को हौसला दे कर उसे जिंदा रखना भी एक तरह से सामाजिक सेवा ही है। इतना सोच कर मैंने चैन की सांस ली।”

अन्तर्द्वंद्व में फंसे मन की स्थिति घड़ी की सुइयों की भांति होती है जो चाहे कितना भी घूम ले, स्वयं को केन्द्र की पकड़ से मुक्त नहीं कर सकती। एक तरफ मुझे संतोष था कि मैंने कुछ अच्छा काम किया

है, तो दूसरी तरफ ये डर सता रहा था कि कहीं मेरे पैसे का उपयोग वो नशा करने में तो नहीं करेंगे। इस असमंजस में पड़े मुँह लटकाए मैं घर पहुँची।

दरवाजा खोलते ही माँ ने पूछा - “आज बॉस से डांट सुनी हो या किसी से झगड़ा हुआ? खाना खाई हो न, क्या हुआ, कुछ बोलती क्यों नहीं?” दबे स्वर में मैंने कहा - “आज मैंने चैरीटेबल ट्रस्ट के लिए कुछ डोनेट किया।”

“हाँ, तो क्या हुआ? इसमें मुँह लटकाने की क्या बात है? ये तो अच्छी बात है न” माँ ने कहा।

मैंने कहा, “एक औरत बता रही थी कि ये सब बिजनेस है, दयालु इंसानों को ठग कर अपना उल्लू सीधा करते हैं।”

माँ ने कहा - “किसी के लिए कुछ कर के उस पर इतना सोचा नहीं करते। क्या सूरज धूप देकर कभी इजहार करता है कि उसने इस धरती के लिए कुछ किया है? क्या धरती इस बात के लिए अफसोस करती है कि वो समस्त प्राणी जगत के लिए अन्न उगाती हैं? प्राणियों की प्यास बुझा कर नदियाँ कभी मातम मनाती हैं क्या? तुम नाहक परेशान होती हो।”

“ऐसी बात नहीं है माँ। मैंने जो डोनेट किया, उसका मुझे कोई खेद नहीं है। लेकिन अगर उस पैसे का सही उपयोग नहीं होगा तो..., मुझे यही अच्छा नहीं लग रहा है।” बीच में बात को काटते हुए मैंने कहा।

माँ ने मुझे आराम से बैठने के लिए कहा और समझाया - “देश की सरहदों की रक्षा के लिए वैज्ञानिक न जाने कितने हथियार बनाते हैं, वही हथियार आतंकवादियों के हाथों लगते ही विनाशकारी हो जाते हैं। इसका मतलब यह तो नहीं है न कि वैज्ञानिक उपकरणों के आविष्कार में पाबन्दी लगा दी जाए। वैज्ञानिकों का काम है मानव कल्याण हेतु नित-नवीन आविष्कार करते रहना, जो वे करते हैं। उन आविष्कारों का उपयोग सृजन अथवा विनाश के लिए करना है, ये उपयोगकर्ता के विवेक पर निर्भर करता है। इसलिए अब मन को शान्त करो।”

बात मेरी समझ में आ गई और मैंने स्थिर जल पर अनावश्यक कंकड़ फेंक कर अनगिनत तरंगें उत्पन्न करना बंद कर दिया।

-रानी

पत्नी - प्रमोद कुमार दास
कनिष्ठ अनुवादक

विकल्प



बहुत कुछ पीछे इसलिए छूट जाता है क्योंकि हमें आगे बहुत कुछ पाना रहता है। हर व्यक्ति के मिलने-बिछड़ने की कहानी के पीछे भी यही एक बात होती है। वैसे तो बहुत कुछ अपने हाथ में होता है लेकिन कभी-कभी इंसान बाध्य हो जाता है। सही चुनाव न कर पाने के कारण कभी सम्पूर्ण जीवन पछतावे में बीतता है तो कभी इंसान स्वयं को झूठा दिलासा देता रहता है। स्वयं को झूठा दिलासा देने वाले व्यक्तियों में प्रायः आत्मविश्वास की कमी दिखाई देती है। आत्मविश्वास खोये हुए इंसान की दशा उस पक्षी के समान होती है जो पिंजरे से मुक्ति मिलने पर भी उड़ नहीं पाता है। इसलिए चुनाव हमेशा बहुत सोच-समझ कर करना चाहिए। एक बार जो भी निर्णय ले लिया उस पर हर हाल में कायम रहना चाहिए।

विकल्प का होना और विकल्प ले कर चलना दोनों ही अलग बात हैं। विकल्प ले कर चलना ठीक उस जलयान जैसा ही है जिसमें अन्य छोटी-छोटी नाव रखी होती हैं और जलयान के डूबने की स्थिति में उन नावों पर सवार हो कर बचा जा सकता है। परन्तु क्या कभी वे नाव उस जलयान का स्थान ले सकती हैं, कभी नहीं। विकल्प के होने से तात्पर्य उस स्थिति में, उसी वातावरण में स्वयं को बनाए रखने के लिए प्रथम और अंतिम साधन ढूँढ लेना है। इस प्रकार संघर्ष से अनुभव मिलता है और अनुभव से आत्मविश्वास में वृद्धि होती है अर्थात् एक समानान्तर चलता है और दूसरे को खोज कर निकालना पड़ता है। वैसे तो दोनों ही स्थिति में जलयान का विकल्प हूबहू जलयान ही हो सकता है।

साधारणतः विकल्प वही लेकर चलते हैं जो भविष्य को लेकर संशय में रहते हैं। संशय में रहने वाले की दशा दो नावों में पैर रखने के समान होती है और इस स्थिति में व्यक्ति न घर का रहता है और न ही घाट का। इसे यूँ समझा जा सकता है कि विकल्प रखने वाले को प्रायः श्रेष्ठ नहीं मिलता है। लेकिन इस स्थिति में दोनों में से कोई एक अवश्य मिल जाता है या फिर कोई नहीं भी मिल सकता है और इसकी गुंजाईश रहती है। कोई भी निर्णय वर्तमान को देख कर, सोच-विचार कर तथा भविष्य को ध्यान में रखते हुए लेना उत्तम होता है। अपने द्वारा लिए गए निर्णय को सही साबित करने के लिए कोई भी कीमत चुकाने के लिए तैयार रहना चाहिए एवं निरन्तर प्रयास करते रहना चाहिए और यह निरन्तर प्रयास उसे उस कार्य में दक्ष बनाता है। फिर यही दक्षता उसे उसके मंजिल तक ले जाती है।

कहने का तात्पर्य यह बिल्कुल भी नहीं है कि विकल्प को महत्वहीन समझा जाए। ध्यान एक स्थान पर केंद्रित होने और निरन्तर एक दिशा में आगे बढ़ते रहने से सफलता जल्दी हाथ लगती है। लेकिन अलग-अलग क्षेत्र में ध्यान देने और अलग-अलग दिशा में जाने से दिग्भ्रमित होने का खतरा रहता है। इसलिए विकल्प को विकल्प तक ही रहने देना चाहिए। विकल्प कभी भी प्रमुख का स्थान नहीं ले सकता, क्योंकि चाय कभी भी कॉफी का स्थान नहीं लिया है लेकिन चाय का भी अपना एक अलग महत्व है। अब तय यह करना है कि कॉफी पीना है या फिर कॉफी के जैसा कुछ पीना है। कॉफी पीना है तो कॉफी बनाओ और पी लो, लेकिन चायपत्ती डाल कर कॉफी का स्वाद ढूँढना मूर्खता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

प्रमोद कुमार दास
कनिष्ठ अनुवादक

यादें



“यादें, मधुर यादें, बचपन की सुहानी यादें” यादों के बिना जीवन अधूरा है। जीवन के हर बीते हुए क्षण की कुछ यादें होती हैं। समय रूकता नहीं। यह निरंतर गति से चलता रहता है। बचपन से लेकर जवानी तक और जवानी से लेकर बुढ़ापे तक मनुष्य हर पल की यादें संजोकर रखता है, चाहे वह फोटोग्राफ के रूप में हो अथवा ऑडियो-विडियो के रूप में हो। इन्हीं यादों के पलों को देखकर उन पलों को जीने की कोशिश करता है। उस पल में साथ रहे सगे-सम्बन्धी, मित्रों आदि को याद करता है।

यादों में सबसे मधुर पल होते हैं बचपन के बिताये हुए दिन। बचपन एक ऐसा समय होता है जब कोई चिन्ता घर नहीं करती। सर के ऊपर माँ-बाप का साया होता है। जो मांगो, मिल जाता है। भरपूर प्यार मिलता है। स्कूलों में दोस्तों के साथ हँसी-मजाक, खेल-कूद, लड़ना-झगड़ना, साथ में पढ़ना, रूठना और फिर अगले ही पल सब भूल जाना। उस समय यदि कक्षाओं में ग्रुप फोटोग्राफी हुई हो तो वह आपको और आनन्द देती है। स्कूल के मित्रों का संग होता था - निःछल प्रेम। तत्पश्चात् कॉलेज के दिनों के अलग मित्रों का संग, स्नातकोत्तर स्तर में अलग मित्रों का संग और फिर कार्य स्थल पर अलग मित्रों का समूह बनता है। इसमें सबसे नवीन स्थान कार्य स्थल के मित्रों का रहता है। यही मित्र जीवन में सबसे ज्यादा दिन तक रहते हैं। फिर भी, बचपन के मित्रों का स्थान सर्वोपरि रहता है। उनकी याद ज्यादा आती है। एकसाथ बैठकर भोजन करना, पढ़ना और खेलना, ये पल बहुत याद आते हैं।

किन्तु, समय के साथ जिम्मेदारी बढ़ती है। आदमी समझदार, दायित्ववान बनता जाता है, यौवन में वह विवाह करता है तो फिर परिवार की जिम्मेदारी आ जाती है। पत्नी और बच्चों के बीच रहकर कभी लोग बचपन के मित्रों को भूल जाते हैं। किन्तु वही मनुष्य जब सेवानिवृत्त होकर एकान्त में अपने घर पर बैठा होता है तो बचपन की बातें याद आती हैं क्योंकि बचपन के मित्र सच्चे होते हैं।

आजकल, टेक्नोलॉजी का युग है। लोग मोबाइल और इन्टरनेट में अपनी दुनिया देखते हैं। पहले लोग एक-दूसरे के घर जाते थे, मिलते-जुलते थे, परस्पर प्रेम-भाव बढ़ता था। पहले गाँव-शहरों में प्रतिवर्ष मेले लगते थे जिसमें देश और विदेशों से लोग आकर सामान बेचते थे, खाने के स्टॉल लगते थे, झूले लगते थे, लोग मेलों का आनन्द लेते थे और एक-दूसरे से मिलते थे। इससे आपसी सौहार्द का वातावरण पनपता था। इसका लाभ यह था कि आवश्यकता पड़ने पर या किसी आकस्मिक स्थिति में लोग एक-दूसरे की मदद किया करते थे। लेकिन समय के साथ वो दौर अब नहीं रहा। इसलिए लोगों के बीच आपसी प्रेम कम होता जा रहा है। लोग अपने में ही रहना पसंद करते हैं। इसका असर यह है कि आदमी को अपने पड़ोसी की भी खबर नहीं होती है। यह स्थिति बहुत चिन्ताजनक है। सभी जीवों में मनुष्य ही एक मात्र सामाजिक प्राणी है। समाज व्यवस्था का अर्थ है कि मनुष्य एक अनुशासन में रहकर एक-दूसरे की सहायता करता हुआ जीवन यापन करेगा। इसमें विभिन्न योग्यता अनुसार मनुष्य को कार्य निर्धारित थे। लेकिन, जैसे-जैसे विकास होता गया, मनुष्य एक यंत्र में परिणत हो गया। उसका विवेक, मनुष्यता खत्म होने लगी। वो आत्मकेन्द्रित और स्वार्थी होता गया। उसे अपनी उन्नति के सिवा और कुछ नहीं दिखता है।

किन्तु, जीवन की शाम 6 बजे पर जब उसका समय नहीं कट रहा होता है तो उसे बचपन के दिन, युवा काल बहुत याद आते हैं। उस व्यक्ति का जीवन बहुत सुन्दर व्यतीत होता है जिसके निकट उसके बचपन के मित्र या यौवन काल के मित्र होते हैं। अन्यथा, वह उस स्वर्णिम युग को याद करके जीता है।

अतः जीवन में यादों का एक महत्वपूर्ण योगदान रहता है। यादें नहीं तो जीवन सूना हो जाता है।

सन्दीप कुमार सरकार
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

चौथा बच्चा

सड़क के किनारे एक विशाल बगीचा था। उस बगीचे में फलों के अनेक प्रकार के पेड़ लगे हुए थे। उसी पेड़ों के झुण्ड में एक कटहल का पेड़ भी अपने स्थान पर अटल होकर खड़ा था। गर्मी के महीने में उस कटहल के पेड़ पर सैकड़ों फल लद जाते थे। कटहल पकने से उसकी गंध दूर तक जाती थी और मनुष्य से लेकर पक्षी तक उस कटहल के पेड़ के पके हुए फलों का आनंद उठाते थे।

उसी पेड़ पर दो कौओं ने कई दिनों के मेहनत के बाद एक घोंसला बनाया। कौओं ने घोंसला बनाने के लिए बड़ी मेहनत की। कौए सारा दिन पतली और सूखी हुई टहनियों के जुगाड़ में इधर उधर भटकते थे और जब उन्हें कोई उपयुक्त टहनियाँ मिल जाती थी तो उनको अपनी चोंच में उठाकर उस कटहल के पेड़ पर घोंसला बनाने के लिए ले आते थे। इसके अतिरिक्त कौओं ने अपना घोंसला बनाने के लिए पतली-पतली तारों और घास-फूस को भी इकट्ठा किया था ताकि उनका घोंसला मजबूत और आरामदायक बने।

कौए तो अपनी रात पेड़ की तनों पर बैठे बैठे बिता लेते थे, तो उन्हें यह घोंसला बनाने की जरूरत क्यों पड़ी? क्योंकि कौओं के परिवार में खुशियां आने वाली थी, मादा कौआ अंडे देने वाली थी और अपने अंडों को सुरक्षित रखने के लिए उन्हें ये घोंसला बनाना पड़ा। जब कौए अपना घोंसला बनाने के लिए जरूरी सामग्री इकट्ठा करने दूर चले जाते थे, उसी समय एक कोयल कू-कू करती हुई आती थी और कौओं के द्वारा तैयार किये जा रहे घोंसले का मुआयना कर जाती थी। मानों उसी कोयल के निरीक्षण में कौए अपना घोंसला तैयार कर रहे थे।

कुछ दिनों के प्रयास के बाद कौओं ने अपना घोंसला तैयार कर लिया और वह समय भी आ गया जब उनके जीवन में नयी खुशियां आने वाली थी। मादा कौआ ने तीन दिन में तीन अंडे दिए। उधर कोयल भी इसी क्षण के इंतज़ार में थी। जब कौए अपने घोंसले से दूर निकल गए तो कोयल उसके घोंसले में आई और उसने एक अंडा दिया और फिर फुर्र हो गयी। धीरे-धीरे अंडे बड़े होने लगे। कुछ समय बाद सभी अण्डों से चूजे बाहर आ गए। कौए सभी चूजों के लिए खाना इकट्ठा कर लाते और उन्हें खिलाते।

फिर चूजे बड़े हुए और अब वे बोलने लगे थे। तीन बच्चे तो ठीक काँव-काँव कर रहे थे लेकिन चौथा बच्चा कुछ अलग ही आवाज लगा रहा था। कौए ने सोचा कि इस बच्चे के गले में कुछ समस्या आ गयी है। क्यों न इसको किसी वैद्य को दिखाया जाए। बस फिर क्या था एक नामी वैद्य कौए के घोंसले में अपने सभी यन्त्र के साथ पहुँच गया। उसने उस चौथे बच्चे की नब्ज टटोली। अरे ये क्या इसकी नब्ज तो कौए जैसी नहीं चल रही है बल्कि इसकी नब्ज किसी घुसपैठिये की तरह चल रही है। उस वैद्य कौआ ने मन ही मन सोचा। वैद्य ने माता-पिता कौए से कहा कि इसका इलाज मिल गया है लेकिन पहले मुझे अपनी फ़ीस चाहिए। मादा कौआ अपनी तिजोरी से फ़ीस लेकर आई और वैद्य जी के हाथ में फ़ीस थमाते हुए बोली कि अब आप अपना उपचार बताइए। वैद्य ने फ़ीस अपने झोले में रखकर गाँठ लगते हुए कहा कि यह तुम्हारा बच्चा नहीं है बल्कि किसी घुसपैठिये का बच्चा है और फिर वहाँ से फुर्र हो गया।

चौथा बच्चा सारी बात सुनकर डर गया था लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी और उसने फैसला किया कि वह आने वाली किसी भी मुसीबत का डटकर सामना करेगा। इधर वैद्य जी से इतना सुनते ही कौए गुस्से से लाल हो गए और उन्होंने उस चौथे बच्चे को अपने घोंसले से बाहर गिरा दिया। उस चौथे बच्चे ने घोंसले से गिरते समय अपना पंख फड़फड़ाना शुरू किया। 'अरे ये क्या मैं तो अब उड़ भी सकता हूँ' और उस चौथे बच्चे ने उड़ान भरी। लेकिन वह ज्यादा ऊँचा और दूर तक नहीं उड़ सका।

वह दोनों कौए उस चौथे बच्चे के पीछे पड़ गए और उसे अपनी चोंच मार-मार कर हानि पहुँचा रहे थे। लेकिन उस चौथे बच्चे ने उन दोनों कौए का डटकर मुकाबला किया और कभी-कभी बचने के लिए एक डाल से दूसरे डाल पर उड़ जाता था। कौए लगातार उसे परेशान कर रहे थे।

वहीं सड़क किनारे चाय की एक दुकान थी। वहां कुछ लोग चाय पी रहे थे। तभी वहाँ तीन-चार कुत्तों का एक झुण्ड आ धमका और उन कुत्तों का ध्यान चौथे बच्चे और दोनों कौए के बीच चल रहे मल्ल युद्ध पर गया। अब क्या था। उन कुत्तों ने भी उस चौथे बच्चे के ऊपर हमला करना शुरू कर दिया। कोई कुत्ता उस निरीह चौथे बच्चे का पंख खींचता तो दूसरा उसे अपनी मुंह में दबोच कर दाएं-बाएं जोर-जोर से झटका देते हुए हिलाता और फिर छोड़ देता। इधर कौओं ने देखा कि उनका शिकार कुत्तों ने छीन लिया है तो कौए जोर-जोर से काँव-काँव की आवाज लगाकर अपने बिरादरी के कौओं को इकट्ठा करने लगे।

तभी उस चाय की दुकान पर एक सात साल की बच्ची बिस्कुट लेने आयी और उसका ध्यान काँव-काँव की तेज आवाज की तरफ चला गया। उसने देखा कि एक छोटी सी चिड़िया के पीछे कुछ कुत्ते और कौवे पड़े हुए थे। उसने उस चौथे बच्चे की जान बचाने की योजना बनाई। उसने अपने पैसों से दुकान से कुछ बिस्कुट खरीदे और उसमें से कुछ बिस्कुट कुत्तों के तरफ और कुछ बिस्कुट कौओं के तरफ उछाल दिए और बाकि बचे बिस्कुट के साथ उस घायल चौथे बच्चे के तरफ चली गयी।

चौथा बच्चा उसे देखकर घबरा गया, लेकिन उस छोटी बच्ची ने उसके ऊपर प्यार से हाथ रखा और उसकी चोंच में बिस्कुट का एक छोटा टुकड़ा रख दिया। उस चौथे बच्चे ने उसे खा लिया। फिर छोटी बच्ची ने उसे पानी भी पिलाया। अब जा कर उस चौथे बच्चे के जान में जान आई।

फिर वो बच्ची उस चौथे बच्चे को अपने साथ लेकर घर आ गयी। जब वह चौथा बच्चा लड़की के यहाँ खा पीकर स्वस्थ हो गया तो उस छोटी लड़की ने उसे फिर से उसी बगीचे में छोड़ दिया। अब वह चौथा बच्चा बहुत तेजी से उड़ सकता था और वह अपनी कलाबाजी दिखाते हुए वहां से दूर चला गया।

नौ-दस महीने बाद बसंत ऋतु में सुबह के समय वह छोटी बच्ची अपने घर की छत पर बैठकर धूप सेंक रही थी कि तभी पीछे से आवाज आयी 'कू-कू'। उसने पीछे मुड़कर देखा तो छत की मुंडेर पर बैठी एक कोयल उसे देख-देख कर 'कू-कू' की मधुर आवाज में गाना गाए जा रही थी। उसे समझते देर न लगी कि यह कौन है, और वह बिस्कुट और पानी लाने छत से नीचे की तरफ दौड़ पड़ी।

प्रफुल्ल कुमार झा
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

मां की ममता



ममता शब्द कानों में पड़ते ही जो व्यक्तित्व सबसे पहले दिमाग में उभरता है, वह है मां। मां जो पूरे संसार की जननी होती है। मां ना होती तो यह संसार शायद ना होता। बच्चे के जन्म से ही नहीं, गर्भावस्था की जानकारी के प्रथम दिन से बच्चे को अपने अंदर महसूस करने के दिन से ही मां की जिम्मेदारियां शुरू हो जाती हैं। बच्चे को जन्म देने के लिए मां को किन-किन विकट परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है यह सिर्फ एक मां ही जानती है। परंतु हर कष्ट गौण हो जाता है जब अपने शरीर का अंग जीते-जागते प्राणी के रूप में मां की गोद में आता है। मां को अपने दुख तकलीफ से बढ़कर अपने बच्चे की खुशी सर्वोपरि होती है।

अपने बच्चे की खुशी के लिए हर कष्ट उठाने को तैयार रहती है मां। मां और बच्चे का जुड़ाव बहुत ही गहरा होता है जिसे संसार का कोई भी तूफान, कोई भी आंधी नहीं तोड़ सकता। कहते हैं एक आत्मा जन्म लेने से पहले अपनी मां का चुनाव स्वयं ही करती है। संतान चाहे कितना कष्ट दे अपनी मां को, लेकिन मां के मुंह से अपने बच्चे के लिए हमेशा सिर्फ और सिर्फ दुआएं ही निकलती हैं। वह कहते हैं ना “पूत कपूत हो सकता है परंतु माता कुमाता नहीं हो सकती।”

आज के युग में मां की जिम्मेदारियां बढ़ती ही चली जा रही हैं, हर एक क्षेत्र में अग्रणी मां रूपी महिला अपने बच्चों के बेहतर भविष्य के लिए प्रयासरत रहती है। ऐसा ही एक वाक्या सामने आया जब हम अपने किसी परिचित को ट्रेन में बैठाने स्टेशन गए थे। वहाँ एक बहुत सुसभ्य, आकर्षक व्यक्तित्व वाली महिला अपने पति और अपने बच्चों के साथ थी। हमारे परिचित के सामने वाली सीट पर ही वह परिवार बैठा था। जैसे ही ट्रेन स्टेशन से छूटने वाली थी उस महिला ने, जो अपने बच्चों को बार-बार हिदायतें दे रही थी, ने अपनी आंखों पर काला चश्मा पहन लिया। उस दंपति का बेटा जो लगभग 8-9 साल का रहा होगा, अपनी मां से चिपका हुआ था, महिला ने उसे अपने से अलग किया एवं डब्बे से उतर गई। उनका बेटा बुरी तरह रोने लगा। मैंने देखा वह महिला जो प्लेटफार्म पर खड़ी थी खिड़की से झाँकते हुए देख रही थी, लाख न चाहते हुए भी अपने आंसूओं को छुपा नहीं पाई, आखिर थी तो मां ही। प्रकृति भी उस दिन एक मां को रोता देख कर खूब रोई, खूब बरसी, खूब तेज बारिश होने लगी और ट्रेन प्लेटफार्म से छूट गई। मैं जो अभी तक उस महिला को टकटकी लगाए देख रही थी, मैंने देखा कि वह अभी भी रो रही थी पर फर्क सिर्फ इतना था कि वह अपने आंसूओं को बारिश की बूंदों में छुपाने की कोशिश कर रही थी। मैंने उस महिला को पानी की बोतल देनी चाही लेकिन उसने मना कर दिया। मैंने उस महिला से पूछ ही लिया कि क्या आपके बच्चों को हॉस्टल भेजा जा रहा है? महिला ने कहा नहीं, उसने आज तक अपने बच्चों को खुद से कभी अलग नहीं किया था, परंतु समय और परिस्थितियों के कारण कभी-कभी अपनी भावनाओं पर काबू रखना पड़ता है एवं समय के साथ खुद को बदलना पड़ता है। समय और परिस्थितियां ऐसी हैं कि उसे अपने बच्चों से अलग होना पड़ रहा है। उसका तबादला दूसरे शहर में होने के कारण उसका परिवार उसे नए शहर में छोड़ने के लिए उसके साथ आया था।

उस मां की आवाज के भारीपन और उसकी आंखों के आंसूओं से महसूस हुआ कि अपने बच्चों से दूर रहना मां के लिए कितना बड़ा कष्ट है, परंतु बच्चों की खुशी के लिए, बच्चों के बेहतर भविष्य के लिए मां को अपने बच्चों से दूर रहना पड़ता है। मां अपनी हर खुशी अपने बच्चों में ढूंढती है। हम कितने ही बड़े हो जाएं पर मां के लिए वही छोटे बच्चे रहते हैं। मां की फिक्र अपने बच्चे के लिए हमेशा रहती है चाहे

बच्चा 1 दिन का हो या 60 साल का क्योंकि मां के लिए उसका बच्चा, बच्चा ही रहता है। हर मां चाहे कितने भी कष्ट उठा ले पर अपने बच्चे के लिए सलामती की दुआएं मांगेगी। यदि मृत्यु भी आए तब भी मां के मन में यही ख्याल होगा कि मेरे बच्चे ठीक रहें। कहने को आज की मां आधुनिक हो चुकी है पर फिर

भी एक मां की ममता अपने बच्चों के लिए कभी नहीं बदल सकती। मां अपनी हर जिम्मेदारी का निर्वाह बखूबी कर रही है परंतु फिर भी मां के मन में ममता का भाव आज भी वही है जो पुरातन काल में मां के मन में रहा, जो मां की ममता मां यशोदा के मन में थी, मां कुंती के मन में थी वही मां की ममता आज की नारी के मन में भी है क्योंकि मां की ममता कभी नहीं बदल सकती। आधुनिक होते हुए भी मां अपने बच्चों के लिए हर मुसीबत झेलने को तैयार है, हर कष्ट उठाकर भी अपने बच्चों का बेहतर भविष्य चाहती है। अंत में मैं एक मां के लिए यही कहना चाहूंगी।

**“मां तेरी अजब कहानी
आंचल में दूध, आंखों में पानी।”***

**सुदेश कुमारी
वरिष्ठ अनुवादक**

कोरोना डायरी

नवंबर 2019 में चीन के वुहान शहर से एक ऐसा खतरनाक वायरस पैदा हुआ जिससे पूरी दुनिया तबाह हो गई जो कोरोना वायरस के नाम से जाना जाने लगा। ये वायरस एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के संपर्क में आने से फैलता गया। इस प्रकार पूरी दुनिया इस वायरस के चपेट में आ गई। जिस तरह से वायरस पहले चीन के वुहान शहर से पैदा हुआ, ठीक उसी समय के बाद अगर एक देश से दूसरे देश तक आवाजाही बंद हो गई होती तो शायद यह वायरस इतनी तेजी से नहीं फैलता और न ही इतने अधिक व्यक्तियों की मृत्यु होती। वायरस फैलने के तीन-चार माह बाद पता चला कि चीन में ये वायरस बहुत तेजी से फैल रहा है। उसके बाद सभी देशों ने एक दूसरे देश के साथ यातायात पूरी तरह बंद कर दिया लेकिन इस बीच बहुत सारे देश में यह वायरस फैल चुका था। भारत में भी यह वायरस तेजी से फैलना शुरू हो चुका था।

इस वायरस की वजह से भारत सरकार द्वारा कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए जैसे – जनता कर्फ्यू, डॉक्टर-नर्सों के लिए ताली-थाली बजाकर हौसला बढ़ाना, दीये जलाना एवं अंत में संपूर्ण लॉक डाउन लगाया गया। जिससे एक जगह से दूसरी जगह पर आने-जाने पर पूरी तरह से पाबंदी लगा दी गई। इससे आम आदमी को काफी दिक्कतों का सामना भी करना पड़ा विशेषकर विभिन्न राज्यों में काम करने वाले मजदूरों को घर वापसी के दौरान कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा। कुछ मजदूरों ने रास्ते में ही दम तोड़ दिया। कई दिनों तक भूखे-प्यासे पैदल ही उन्हें लौटना पड़ा। जो जहाँ थे वहीं फंसे थे। सभी की दिनचर्या अस्त-व्यस्त हो गयी थी।

इस बीच कुछ महत्वपूर्ण देशों के वैज्ञानिक इस वायरस की वैक्सीन खोजने में लग गए। कुछ देश इस वायरस की वैक्सीन बनाने में कामयाब भी हो गए। हमारे देश ने भी इस वायरस की वैक्सीन बनाने में कामयाबी हासिल की। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में इस वायरस पर नियंत्रण करने में यहाँ के डाक्टर, नर्स, पुलिस, सेना एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं का बहुत योगदान रहा।

फिलहाल हमारे देश में अब वैक्सीनेशन का काम जोर-शोर से चल रहा है। लेकिन हमें ये भी नहीं भूलना चाहिए कि टीका लगने से बीमारी दूर हो जायेगी। हमें हर वक्त सावधानियाँ बरतनी होंगी, जैसे – साबुन से हाथ धोना, फेस मास्क लगाना एवं बेवजह भीड़-भाड़ वाली जगह में जाने से बचना।

सोनु कुमार चौधरी
आंकड़ा प्रविष्टक

286,640

564,225

समाज एवं नारी



नारी के कई रूप होते हैं - माँ, बहन, बेटी। प्रत्येक रूप में नारी अपने परिवार, समाज एवं देश के लिए अविस्मरणीय भूमिका निभाती है। बात चाहे अपने परिवार की हो, समाज की या अपने देश की, नारी के अवदानों को कम शब्दों में आंकना असंभव है। नारी को जन्म से अपने जीवन के आखिरी दौर तक न जाने कितनी बार इस जीवन रूपी खेल में समझौता करना पड़ता है, न जाने कितनी बार अपनी इच्छाओं को कुंठाओं के बादल में सिसकते हुए दबाना पड़ता है, फिर भी घोर अंधकार में भी वह हँसती-मुस्कुराती हुई जीवन रूपी गर्जनाओं का सामना करती हुई जीवन के हर उन रास्तों पर चलती रहती है जिस पर शायद एक आम आदमी चलने में कतराता हो।

आज हम इक्कीसवीं शताब्दी में खड़े हैं। आज का समाज एक शिक्षित समाज है। आज हम विकास के उस पथ पर आगे बढ़ रहे हैं जहाँ देश आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक, तकनीकी इत्यादि प्रत्येक क्षेत्र अपने वर्चस्व को स्थापित कर रहा है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आज प्रत्येक देश समृद्धशाली बन चुका है। चाहे वह चाँद पर सेटेलाइट भेजने संबंधी मिशन हो या फिर मंगल ग्रह पर पानी की खोज हो या संचार क्रांति में नए मानकों की खोज हो विज्ञान ने प्रत्येक क्षेत्र में नए-नए आविष्कारों को जन्म देकर अपनी गौरवपूर्ण स्थिति बना ली है।

कहने का तात्पर्य यह है कि आज के विकासशील समाज में रहकर, सभी सुख-सुविधाओं को हासिल करने के बाद भी, क्या हम अपने आपको पूर्ण रूप से शिक्षित मान सकते हैं? शायद इसका उत्तर 'ना' में दिया जाना ज्यादा उचित होगा। विकास की उत्कर्षता पर खड़े होकर भी आज के युग में नारी की स्थिति में ज्यादा सुधार नहीं हुआ है। यद्यपि भूत से वर्तमान समय में नारी की स्थिति में सिर्फ इतना ही फर्क है कि आज के समय में नारी की स्थिति की परिभाषा में थोड़ा बहुत बदलाव हुआ है। आज स्त्री अपेक्षाकृत पहले से ज्यादा शिक्षित है। आज हमारे समाज में स्त्री भी पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर काम कर रही है, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्हें अपनी सत्ता को कायम करने का मौका मिल रहा है, आज वह अपने हर सपने को साकार करने का हौसला रखती है, फिर भी कहीं न कहीं इक्कीसवीं सदी के पढ़े-लिखे समाज में सही अर्थों में स्त्री की जो स्थिति होनी चाहिए थी, वह नहीं है।

इतिहास के पन्नों को पलटने से हमें पता चलता है कि वैदिक युग से ही नारी की सोचनीय स्थिति संघर्षपूर्ण रही है। चाहे वह रामायण में रावण द्वारा सीता का हरण हो, या फिर रावण के पास से लौटने के बाद खुद राम द्वारा उसकी अग्निपरीक्षा हो, या फिर महाभारत में द्रौपदी का भरी सभा में उसका वस्त्र-हरण हो, नारी को हमेशा ही संघर्ष करना पड़ा है। उसे दूसरों के सपने को साकार करने के लिए अपने सपनों की बलि देनी होती है। हालांकि पुरानी सदी से आधुनिक युग तक आते-आते काफी बदलाव नजर आया है। वर्तमान समय में एक शिक्षित नारी अपने घर एवं बाहर दोनों स्थानों पर संतुलन बनाए रखते हुए अपने कार्य को भलीभाँति अंजाम दे रही है। अपने बच्चों की देखभाल करनी हो, घर के लोगों की सेवा या फिर कार्यालयों में अपनी ऊँची को निभाना, सभी स्थानों में स्त्री समझदारी से संतुलन बनाए रखते हुए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज नारी पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर लगभग सभी क्षेत्रों में चाहे वो आर्थिक हो या राजनीतिक जीवन रूपी परिक्रमा का सामना कर रही है। कल्पना चावला, सानिया मिर्जा, सायना नेहवाल, मेरी कॉम, अरुणिमा सिन्हा, मेधा पाटकर, अमृता प्रीतम, महाश्वेता देवी, मिसाइल वूमन, किरण बेदी, झूलन

गोस्वामी, पी.वी. सिंधु, इत्यादि जैसी कई नारियों ने अपने-अपने क्षेत्रों में अपनी जीत के तिरंगे को फहराया है एवं अपना दुनिया में लोहा मनवाया है।

आज के समय में प्रत्येक क्षेत्र में नारियों द्वारा अभूतपूर्व सफलता हासिल करने के बाद भी हम यह नहीं कह सकते कि आज की नारी पूर्ण रूप से स्वतंत्र है। यदि पूर्ण रूप से नारी स्वतंत्र होती तो एसिड अटैक, बलात्कार, छेड़खानी, आग में जलने जैसी नृशंस कृत्यों से नारी को गुजरना नहीं पड़ता। आज भी हमारे समाज में दहेज प्रथा उसी धृष्टता से अपनी धाक जमाए हुए है। कितनी ही बहू-बेटियों को दहेज की आग में झुलस कर अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ती है, एसिड अटैक, बलात्कार जैसी भयावह घटनाओं से एक नारी को गुजरना पड़ता है और वे ताउम्र मानसिक रूप से आहत रहती है। महिलाओं के साथ छेड़खानी तो आज आम घटना बन चुकी है। दुर्भाग्यवश आज हमारे शिक्षित समाज में ये घटनाएं बढ़ गई हैं।

आज जरूरत है प्रत्येक नारी को जागरूक बनने की, उन्हें अपने अधिकारों को पहचानने का समय आ चुका है जिससे वह अपने अधिकारों को समझे, अपने ऊपर होने वाले किसी भी प्रकार के अत्याचारों का डटकर मुकाबला करें, बिना डरे, बिना दबे अपने सपनों की उड़ान भरे एवं समाज में अपना सिर ऊँचा करके जिए। नारी को उसके अधिकारों से अवगत कराया जाता है। प्रत्येक वर्ष 8 मार्च को अंतराष्ट्रीय महिला दिवस का पालन किया जाता है। राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में उनके द्वारा दिए गए अवदानों की सराहना की जाती है। किंतु केवल इतना ही पर्याप्त नहीं है। जब हर एक नारी अपने अधिकारों को समझेगी, अपने अंदर छिपी हुई ऊर्जा व शक्ति को पहचानेगी, बेबाक होकर समाज के जंजालों से मुक्त हो अपने सपनों को पूरा करने का हौसला रख पाएगी, अपने ऊपर होने वाले किसी भी प्रकार के अत्याचारों का बेबाकी से मुकाबला कर पाएगी, तब सही अर्थों में महिला दिवस का पालन करना पूर्ण रूप से सार्थक हो पाएगा एवं समाज पूर्ण रूप से शिक्षित एवं विकसित कहलाएगा।

सोमा चक्रवर्ती भादुड़ी
कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

डिस्टेंसिंग



“ये सोशल डिस्टेंसिंग क्या होती है बहन?”- वृद्धाश्रम की एक वृद्धा ने टी.वी. पर समाचार देखते हुए दूसरी वृद्धा से पूछा, जो उससे अपेक्षाकृत कम उम्र की थी।

“एक नए प्रकार की बीमारी चली है दीदी। बताते हैं कि संक्रमित लोगों के संपर्क में आने से, उनके छूने से यह तेजी से फैलती है। उस बीमारी का कीड़ा कहीं भी हो सकता है। बहुत खतरनाक है। इसलिए सरकार द्वारा सोशल डिस्टेंसिंग का पालन करने को कहा जा रहा है, ताकि लोग समाज में एक दूसरे से दूरी बनाकर रहे। ‘सोशल’ माने सामाजिक और ‘डिस्टेंसिंग’ माने दूरी।” दूसरी वृद्धा ने काफी अच्छे से समझा दिया।

रात को लेटे-लेटे वृद्धा सोचने लगी- पता नहीं कैसे-कैसे रोग फैलते है। एकदम छुआछूत जैसी, छूने भर से फैल जाए। हे राम। दुनिया बहुत आगे निकल चुकी है, नए-नए रोग भी आने लगे हैं। ये तो अच्छा है कि बेटा इस शहर में ऊंचे पद पर है, तभी तो वो मुझे गांव से शहर ले आया और कुछेक दिन बाद ही मुझे यहाँ एक अलग कमरा दे दिया। पढ़ा-लिखा है, सोशल दूरी के बारे में जानता है, क्या करेगा? परिवार को भी तो बचाना है न, कौन जाने मुझे ही रोग हो, इसीलिए मुझे... हे राम! नहीं, नहीं मैं ये कैसे सोच सकती हूँ। बेटे ने अच्छे के लिए ही किया है। महीने में एक बार आता तो है मुझसे मिलने।

लेकिन... लेकिन... पहले तो बहुत बार फोन करता था, अब तो वो भी बहुत कम करता है। क्या मेरे बारे में वो सोचता नहीं है? नहीं... नहीं... ऐसा नहीं हो सकता है; बेटा है मेरा। लेकिन कौन जाने आज कल के रोग का कीड़ा; सोचने से भी फैलता हो तो? हां...हां... ऐसा क्यों नहीं हो सकता है। हम लोग मन में किसी व्यक्ति को सोच कर जो हमसे कोसों दूर है, फोन पर सिर्फ दो-चार नंबर दबा कर उससे बात नहीं कर लेते हैं? बेटे के फोन पर तो हम बहू के साथ आमने-सामने बात किए थे; चेहरा देखते हुए; ऐसा लगता था कि सामने ही बैठी हुई है। ये नयी दुनिया है, कुछ भी हो सकता है, सोचने मात्र से रोग भी फैल सकता है; तो हो सकता है कि बेटा भी मुझसे मन से दूरी बनाए रखना चाहता है; हो सकता है फोन पर बात करने से भी बीमारी का कीड़ा फैलता हो। शायद इसीलिए बेटा डिस्टेंसिंग यानि कि दूरी बनाए हुए है - मन की दूरी।

लेकिन मैं क्या करूँ? मैं तो माँ हूँ, बेटे की याद तो आती ही है। फोन पर कैसे ना बात करें? ना; लेकिन अब नहीं। परिवार की भलाई की खातिर मुझे भी मन की दूरी बनाए रखनी चाहिए। हां, हां, यही ठीक रहेगा। अबकी बार जब बेटा फोन करेगा, तब साफ बोल दूँगे कि बेटा हम मन की दूरी का पालन कर रहे हैं। तुम भी हमारे बारे में ज्यादा मत सोचो, नहीं तो बार-बार फोन करने का मन करेगा। फोन पर बात करने से भी रोग फैल सकता है। इसीलिए डिस्टेंसिंग माने दूरी।

लेकिन मन को अंग्रेजी में क्या कहते हैं? कोई बात नहीं; कल ही उर्मिला से पूछ लूँगी। वो जो शब्द बोलेंगी उसी के साथ ‘डिस्टेंसिंग’ शब्द जोड़ के बेटे से कह दूँगी। शायद अंग्रेजी में अच्छे से समझ पाएगा।

और ऐसा सोचते-सोचते वृद्धा ने दृढ़ निश्चय कर लिया... और नींद के आगोश में समाती चली गयी...

बिपुल कुमार साव
कनिष्ठ अनुवादक

कामकाजी महिलाएं



प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति दयनीय रही है। उनका हर स्तर पर अपमान और शोषण होता रहा है। घर में सम्मान पाने एवं घरेलू हिंसा से बचने के लिए एक महिला को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की सलाह दी जाती है। आज मध्यवर्गीय परिवार की महिला शिक्षित होने के चलते एवं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने की वजह से नौकरी करने लगी है। परंतु, हमारे समाज का ढांचा कुछ इस प्रकार है कि महिला को कामकाजी होने के बाद भी कई प्रकार के संघर्षों से जूझना पड़ता है, अब उन्हें अपने कार्यक्षेत्र के साथ-साथ घर की जिम्मेदारी भी निभानी पड़ती है। उसके लिए उन्हें सवेरे जल्दी उठकर अपने परिवार अर्थात् अपने बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों के लिए भोजन की व्यवस्था करनी होती है, बच्चों के सभी कार्यों को शीघ्र निबटाना होता है। अर्थात् उन्हें अपने घर-परिवार, रिश्ते-नाते के साथ-साथ अपने ऑफिस में दिए गए कार्यों को ठीक से करना होता है क्योंकि किसी भी पक्ष को अनदेखा करने पर जीवन की गाड़ी डगमगाने लगती है। ऐसे में अपने लिए भी वक्त निकालना मुश्किल हो जाता है। उन्हें दो जिम्मेदारियां साथ-साथ निभानी पड़ती हैं। संध्या समय काम से लौटने के बाद घर के कार्यों में लगना होता है क्योंकि परिवार के पुरुष आज भी ऐसा मानते हैं कि घर के कार्यों को पूर्ण करने की जिम्मेदारी सिर्फ घर की महिला की है। मजबूरन महिला दो भागों में पीसकर रह जाती है।

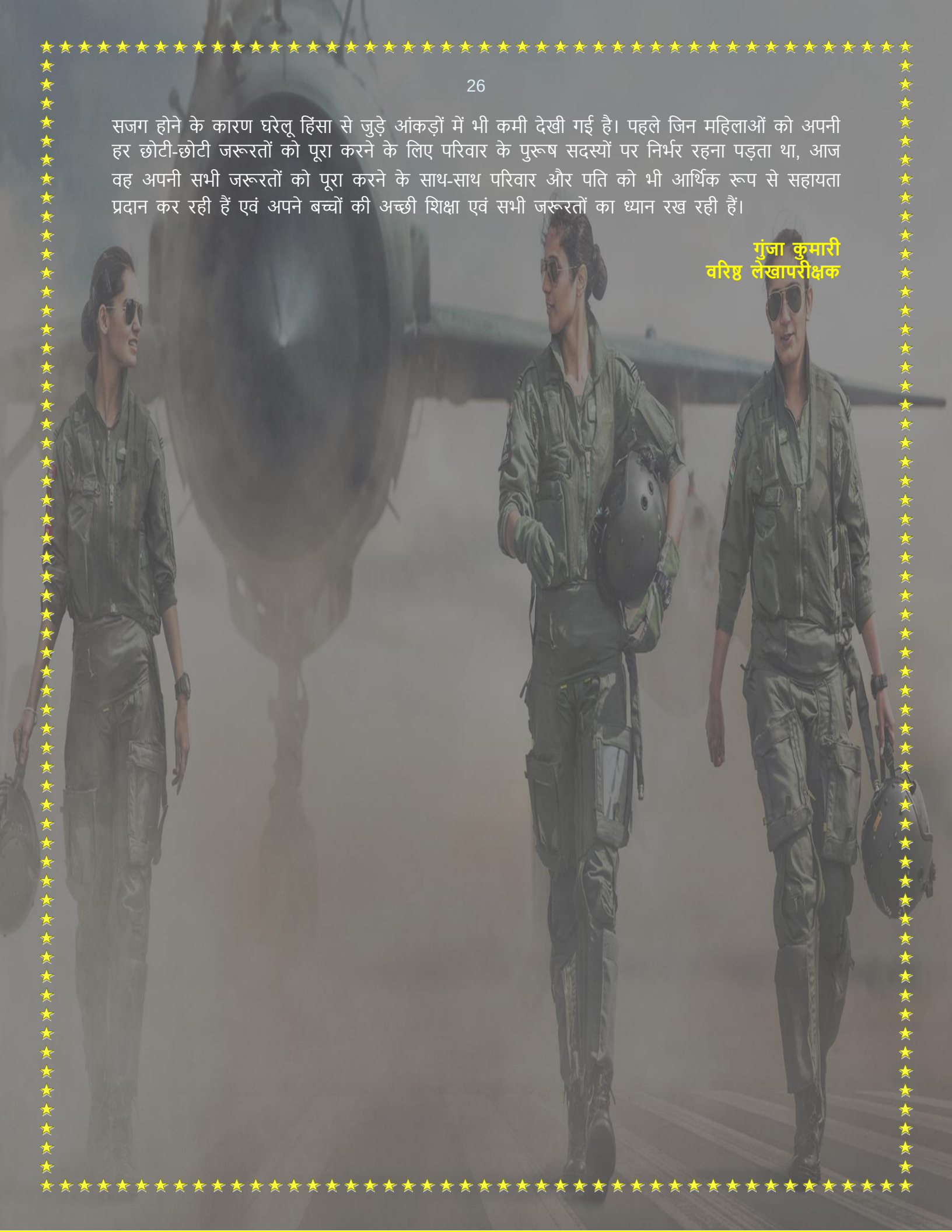
घर में सम्मान पाने, घरेलू हिंसा से बचने एवं परिजनों के अपमान से बचने के लिए एक महिला आत्मनिर्भर होने के लिए घर से बाहर निकलती है तो उसे समाज एवं अन्य लोगों की टीका-टिप्पणी अर्थात् तानाकशी एवं घूरती निगाहों का भी सामना करना पड़ता है। संध्या समय अपने कार्य-स्थल से लौटते समय भी उसे अनेक अनहोनी घटनाओं का सामना करना पड़ता है। बदलते वक्त ने महिलाओं को आर्थिक, शैक्षिक एवं सामाजिक रूप से सशक्त किया है और उनकी आर्थिक स्थिति एवं सम्मान में वृद्धि हुई है। इसके बावजूद अगर कुछ नहीं बदला तो वह है घरेलू जिम्मेदारी, खाना बनाना एवं बच्चों की देखभाल अभी भी महिलाओं का ही काम माना जाना जाता है। घरेलू महिलाओं की तुलना में कामकाजी महिलाओं पर काम का बोझ ज्यादा है। इन महिलाओं को अपनी दोहरी जिम्मेदारी निभाने के लिए ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है।

आम धारणा है कि कामकाजी मां होने से, समय के अभाव के कारण वह बच्चों की शिक्षा एवं उनकी जरूरतों पर ध्यान नहीं दे पाती एवं उनकी सही देखभाल नहीं हो पाती है। लेकिन प्रायः देखा गया है कि कामकाजी महिलाओं के बच्चे अपेक्षाकृत अधिक आत्मनिर्भर और शिक्षित होते हैं। बच्चों की आरंभिक शिक्षा परिवार और माता-पिता के द्वारा ही की जाती है, वे वही सीखती हैं और करती हैं जो परिवार में देखती हैं। यदि उन्होंने शुरू से ही अपने पिता एवं माँ दोनों को शिक्षित एवं आत्म-निर्भर बन कर अपने पैरों पर खड़े हुए देखा है तो परिणामस्वरूप उनके भीतर भी शिक्षा के प्रति रुझान और आत्मनिर्भरता की चाह बढ़ने लगती है। वे बचपन से ही अपने छोटे-छोटे कार्य करना खुद ही सीख जाते हैं जो आगे चलकर काफी हद तक सहायता करते हैं। उन्हें यह ज्ञात हो जाता है कि अपने पैरों पर खड़े होने एवं समाज में प्रतिष्ठापूर्ण जीवन के लिए शिक्षित होना बहुत जरूरी है। इतना ही नहीं महिलाओं का बाहर जाकर काम करना बच्चे और उनके बीच भावनात्मक रिश्ते को और अधिक बढ़ा देता है।

महिलाओं के कामकाजी होने का सकारात्मक पहलू यह भी है कि इससे वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन अपने परिवार को तो सहायता देती ही हैं, साथ ही उनके शिक्षित होने एवं अधिकारों के प्रति

सजग होने के कारण घरेलू हिंसा से जुड़े आंकड़ों में भी कमी देखी गई है। पहले जिन महिलाओं को अपनी हर छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा करने के लिए परिवार के पुरुष सदस्यों पर निर्भर रहना पड़ता था, आज वह अपनी सभी जरूरतों को पूरा करने के साथ-साथ परिवार और पति को भी आर्थिक रूप से सहायता प्रदान कर रही हैं एवं अपने बच्चों की अच्छी शिक्षा एवं सभी जरूरतों का ध्यान रख रही हैं।

गुंजा कुमारी
वरिष्ठ लेखापरीक्षक



स्वामी विवेकानंद के जीवन की आठ प्रेरक कहानियां



स्वामी विवेकानंद के जीवन की आठ प्रेरक कहानियां जो हमें बहुत कुछ सिखा जाती है।

1. संस्कृति वस्त्रों में नहीं, चरित्र के विकास में है

एक बार जब स्वामी विवेकानन्द जी विदेश गए... तो उनका भगवा वस्त्र और पगड़ी देख कर लोगों ने पूछा - आपका बाकी सामान कहाँ है? स्वामी जी बोले - 'बस यही सामान है'। तो कुछ लोगों ने व्यंग्य किया - 'अरे! यह कैसी संस्कृति है आपकी? तन पर केवल एक भगवा चादर लपेट रखी है, कोट - पतलून जैसा कुछ भी पहनावा नहीं है?' इस पर स्वामी विवेकानंद जी मुस्कराए और बोले, - 'हमारी संस्कृति आपकी संस्कृति से भिन्न है.... आपकी संस्कृति का निर्माण आपके दर्जी करते हैं... जबकि हमारी संस्कृति का निर्माण हमारा चरित्र करता है। - संस्कृति वस्त्रों में नहीं, चरित्र के विकास में है।

2. देने का आनंद पाने के आनंद से बड़ा

भ्रमण एवं भाषणों से थके हुए स्वामी विवेकानंद अपने निवास स्थान पर लौटे। उन दिनों वे अमेरिका में एक महिला के यहां ठहरे हुए थे। वे अपने हाथों से भोजन बनाते थे। एक दिन वे भोजन की तैयारी कर रहे थे कि कुछ बच्चे पास आकर खड़े हो गए। उनके पास सामान्यतया बच्चों का आना-जाना लगा ही रहता था। बच्चे भूखे थे। स्वामीजी ने अपनी सारी रोटियां एक-एक कर बच्चों में बांट दी। महिला वहीं बैठी सब देख रही थी। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। आखिर उससे रहा नहीं गया और उसने स्वामीजी से पूछ ही लिया - 'आपने सारी रोटियां उन बच्चों को दे डाली, अब आप क्या खाएंगे?' स्वामीजी के अधरों पर मुस्कान दौड़ गई। उन्होंने प्रसन्न होकर कहा- 'मां, रोटी तो पेट की ज्वाला शांत करने वाली वस्तु है। इस पेट में न सही, उस पेट में ही सही।' देने का आनंद पाने के आनंद से बड़ा होता है।

3. सच्चा पुरुषार्थ

एक विदेशी महिला स्वामी विवेकानंद के समीप आकर बोली : 'मैं आपसे शादी करना चाहती हूँ।' 'विवेकानंद बोले: 'क्यों? मुझसे क्यों?' क्या आप जानती नहीं कि मैं एक संन्यासी हूँ? औरत बोली: 'मैं आपके जैसा ही गौरवशाली, सुशील और तेजोमयी पुत्र चाहती हूँ और वह तब ही संभव होगा जब आप मुझसे विवाह करेंगे।' विवेकानंद बोले: 'हमारी शादी तो संभव नहीं है, परन्तु हाँ एक उपाय है।' औरत ने पूछा 'क्या?' विवेकानंद बोले 'आज से मैं ही आपका पुत्र बन जाता हूँ, आज से आप मेरी माँ बन जाओ। आपको मेरे रूप में मेरे जैसा बेटा मिल जायेगा।' औरत विवेकानंद के चरणों में गिर गयी और बोली कि आप साक्षात् ईश्वर के रूप हैं। इसे कहते हैं पुरुष और ये होता है पुरुषार्थ... एक सच्चा पुरुष वही होता है जो हर नारी के प्रति अपने अन्दर मातृत्व की भावना उत्पन्न कर सके।

4. गंगा हमारी माँ है और उसका नीर, जल नहीं, अमृत है

एक बार स्वामी विवेकानन्द जी अमेरिका में एक सम्मेलन में भाग ले रहे थे। सम्मेलन के बाद कुछ पत्रकारों ने उन से भारत की नदियों के बारे में एक प्रश्न पूछा। पत्रकार ने पूछा - 'स्वामी जी आप के

देश में किस नदी का जल सबसे अच्छा है?" स्वामी जी का उत्तर था - "यमुना का जल सभी नदियों के जल से अच्छा है।" पत्रकार ने फिर पूछा - "स्वामी जी आप के देशवासी तो बोलते हैं कि गंगा का जल सब से अच्छा है।" स्वामी जी का उत्तर था - "कौन कहता है गंगा नदी है, गंगा हमारी माँ है और उस का नीर जल नहीं है, - अमृत है।" यह सुन कर वहाँ बैठे सभी लोग स्तब्ध रह गये और सभी स्वामी जी के सामने निरुत्तर हो गये।

5. लक्ष्य पर ध्यान लगाओ

स्वामी विवेकानंद अमेरिका में भ्रमण कर रहे थे। एक जगह से गुजरते हुए उन्होंने पुल पर खड़े कुछ लड़कों को नदी में तैर रहे अंडे के छिलकों पर बन्दूक से निशाना लगाते देखा। किसी भी लड़के का एक भी निशाना सही नहीं लग रहा था। तब उन्होंने एक लड़के से बन्दूक ली और खुद निशाना लगाने लगे। उन्होंने पहला निशाना लगाया और वो बिल्कुल सही लगा..... फिर एक के बाद एक उन्होंने कुल 12 निशाने लगाये और सभी बिल्कुल सटीक लगे। ये देख लड़के दंग रह गए और उनसे पूछा, - भला आप ये कैसे कर लेते हैं? स्वामी जी बोले, - "तुम जो भी कर रहे हो अपना पूरा दिमाग उसी एक काम में लगाओ। अगर तुम निशाना लगा रहे हो तो तुम्हारा पूरा ध्यान सिर्फ अपने लक्ष्य पर होना चाहिए। तब तुम कभी चूकोगे नहीं। अगर तुम अपना पाठ पढ़ रहे हो सिर्फ पाठ के बारे में सोचो। मेरे देश के बच्चों को यही करना सिखाया जाता है।"

6. डर का सामना

एक बार बनारस में स्वामी जी दुर्गा जी के मंदिर से निकल रहे थे कि तभी वहाँ मौजूद बहुत सारे बंदरों ने उन्हें घेर लिया। वे उनके नजदीक आने लगे और डराने लगे। स्वामी जी भयभीत हो गए और खुद को बचाने के लिए दौड़ कर भागने लगे, पर बन्दर तो मानो पीछे ही पड़ गए और वे उन्हें दौड़ाने लगे। पास खड़ा एक वृद्ध संन्यासी ये सब देख रहा था, उसने स्वामी जी को रोका और बोला, - "रुको! उनका सामना करो!" स्वामी जी तुरन्त पलटे और बंदरों के तरफ बढ़ने लगे, - ऐसा करते ही सभी बन्दर भाग गए। इस घटना से स्वामी जी को एक गंभीर सीख मिली और कई सालों बाद उन्होंने एक संबोधन में कहा भी - यदि तुम कभी किसी चीज से भयभीत हो, तो उससे भागो मत, पलटो और सामना करो।

7. माँ से बढ़कर कोई नहीं

स्वामी विवेकानंद जी से एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया, माँ की महिमा संसार में किस कारण से गाई जाती है? स्वामी जी मुस्कुराए, उस व्यक्ति से बोले, "पांच सेर वजन का एक पत्थर ले आओ।" जब व्यक्ति पत्थर ले आया तो स्वामी जी ने उससे कहा, - "अब इस पत्थर को किसी कपड़े में लपेटकर अपने पेट पर बाँध लो और चौबीस घंटे बाद मेरे पास आओ तो मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूंगा।" स्वामी जी के आदेशानुसार उस व्यक्ति ने पत्थर को अपने पेट पर बाँध लिया और चला गया। पत्थर बंधे हुए दिनभर वो अपना काम करता रहा, किन्तु हर क्षण उसे परेशानी और थकान महसूस हुई। शाम होते-होते पत्थर का बोझ संभाले हुए चलना-फिरना उसके लिए असह्य हो उठा। थका-माँदा वह स्वामी जी के पास पहुंचा और बोला - "मैं इस पत्थर को अब और अधिक देर तक बाँधे नहीं रख सकूंगा। एक प्रश्न का उत्तर पाने के लिए मैं इतनी कड़ी सजा नहीं भुगत सकता।" स्वामी जी मुस्कुराते हुए बोले - "पेट पर इस पत्थर का बोझ तुमसे कुछ घंटे भी नहीं उठाया गया। माँ अपने गर्भ में पलने वाले शिशु को पूरे नौ माह तक ढोती है और गृहस्थी का सारा काम करती है। संसार में माँ के सिवा कोई इतना धैर्यवान और सहनशील नहीं है। इसलिए माँ से बढ़ कर इस संसार में कोई और नहीं है।"

8. अपनी भाषा पर गर्व

एक बार स्वामी विवेकानंद विदेश गए जहाँ उनके स्वागत के लिए कई लोग आये हुए थे। उन लोगों ने स्वामी विवेकानंद की तरफ हाथ मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया और इंग्लिश में हेलो कहा जिसके जवाब में स्वामी जी ने दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते कहा। उन लोगों को लगा कि शायद स्वामी जी को अंग्रेजी नहीं आती है, तो उन लोगों में से एक ने हिंदी में पूछा - "आप कैसे हैं"? तब स्वामी जी ने कहा "आई एम् फाईन थैंक यू"। उन लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने स्वामी जी से पूछा कि जब हमने आपसे इंग्लिश में बात की तो आपने हिंदी में उत्तर दिया और जब हमने हिंदी में पूछा तो आपने इंग्लिश में कहा, इसका क्या कारण है? तब स्वामी जी ने कहा, "जब आप अपनी माँ का सम्मान कर रहे थे तब मैं अपनी माँ का सम्मान कर रहा था और जब आपने मेरी माँ का सम्मान किया तब मैंने आपकी माँ का सम्मान किया। यदि किसी भी भाई बहन को इंग्लिश बोलना या लिखना नहीं आता है तो उन्हें किसी के भी सामने शर्मिंदा होने की जरूरत नहीं है बल्कि शर्मिंदा तो उन्हें होना चाहिए जिन्हें हिंदी नहीं आती है क्योंकि हिंदी ही हमारी राष्ट्र भाषा है हमें तो इस बात पर गर्व होना चाहिए कि हमें हिंदी आती है... क्या आपने किसी देश को देखा है जहाँ सरकारी काम उनकी राष्ट्र भाषा को छोड़ कर किसी अन्य भाषा या इंग्लिश में होता हो..... यहाँ तक की जो भी विदेशी मंत्री या व्यापारी हमारे देश में आते हैं वो अपनी ही भाषा में काम करते हैं या भाषण देते हैं फिर उनके अनुवादक हमें हमारी भाषा या इंग्लिश में अनुवाद करके समझाते हैं..... जब वो अपनी भाषा नहीं छोड़ते तो हमें हमारी राष्ट्र भाषा को छोड़कर इंग्लिश में काम करने की क्या जरूरत है....."

अमृता घोष
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

मनुष्य एवं परिस्थितियां



एक बार की बात है। एक कक्षा में गुरुजी अपने सभी छात्रों को समझाना चाहते थे कि प्रकृति सभी को समान अवसर देती है और उस अवसर का इस्तेमाल करके हम अपना भाग्य खुद बना सकते हैं। इसी बात को ठीक तरह से समझाने के लिए गुरुजी ने तीन कटोरे लिए। पहले कटोरे में एक आलू रखा, दूसरे में अंडा और तीसरे कटोरे में चाय की पत्ती डाल दी। अब तीनों कटोरों में पानी डालकर उनको गैस पर उबलने के लिए रख दिया।

सभी छात्र ये सब हैरान होकर देख रहे थे लेकिन किसी को कुछ समझ नहीं आ रहा था। बीस मिनट बाद जब तीनों बर्तन में उबाल आने लगा, तो गुरुजी ने सभी कटोरों को नीचे उतारा और आलू, अंडा और चाय को बाहर निकाला।

अब उन्होंने सभी छात्रों से तीनों कटोरों को गौर से देखने के लिए कहा। अब भी किसी छात्र को कुछ समझ नहीं आ रहा था।

आखिर में गुरुजी ने एक बच्चे से तीनों (आलू, अंडा और चाय) को स्पर्श करने के लिए कहा। जब छात्र ने आलू को हाथ लगाया तो पाया कि जो आलू पहले काफी कठोर था, वो अब पानी में उबलने के बाद काफी मुलायम हो गया था।

जब छात्र ने अंडे को उठाया तो देखा कि जो अंडा पहले बहुत नाजुक था, वो अब उबलने के बाद कठोर हो गया था। अब बारी थी चाय के कप को उठाने की। जब छात्र ने चाय के कप को उठाया तो देखा चाय की पत्ती ने गर्म पानी के साथ मिलकर अपना रूप बदल लिया था और अब वो चाय बन चुकी थी।

अब गुरुजी ने समझाया कि उन्होंने तीन अलग-अलग चीजों को समान विपत्ति से गुजारा, यानी तीनों को समान रूप से पानी में उबाला लेकिन बाहर आने पर तीनों चीजें एक जैसी नहीं मिली।

आलू जो कठोर था वो मुलायम हो गया, अंडा पहले से कठोर हो गया और चाय की पत्ती ने भी अपना रूप बदल लिया। उसी तरह यह बात इंसानों पर भी लागू होती है।

सभी के जीवन में मुश्किलें आती हैं लेकिन ये पूरी तरह आप पर निर्भर करता है कि आप परेशानी का सामना कैसे करते हैं और मुश्किल दौर से निकलने के बाद क्या बनते हैं। प्रत्येक बहुमूल्य धातु जैसे सोना भी आग में तपने के बाद और मूल्यवान हो जाती है। उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को विकट परिस्थितियों में भी अपना धैर्य बनाए रखना चाहिए।

**आशीष कुमार
वरि. लेखापरीक्षक**

आत्मनिर्भरता तथा कोविड नियंत्रण : संभावना और उम्मीद



“आत्मनिर्भर भारत” यह वाक्यांश हाल में बहुत चर्चित है। कोविड-19 परिस्थिति के दौरान यह उद्घोष सामने आया था। भारत सरकार की तरफ से कोविड परिस्थिति में यह एक सचमुच प्रोत्साहक कदम है। इसका उद्देश्य है कि भारत को विश्व अर्थनीति का एक बड़ा और महत्वपूर्ण अंश बनाना। इसके लिए निपुणता, प्रतियोगिता और लचीलेपन से काम करना तथा ‘आत्मनिर्भर’ और ‘स्व-उत्पन्न’ नीति को लक्ष्य करते हुए आगे बढ़ने की घोषणा की गई है।

इस संदर्भ में पहली घोषणा 12 मई 2020 को कोविड 19 संबंधित आर्थिक पैकेज के दौरान हुई थी। -‘आत्मनिर्भर भारत अभियान’ या ‘आत्मनिर्भर भारत मिशन’। इसके उपरान्त दो और ‘आत्मनिर्भर भारत’ पैकेज (2.0 और 3.0) की घोषणा 12 अक्टूबर और 12 नवंबर 2020 को की गई थी। कुल रु. 29.87 लाख करोड़ के आर्थिक प्रोत्साहन के अंतर्गत अभी तक तीन ‘आत्मनिर्भर भारत’ पैकेज निम्न है :-

1. 12 मई 2020 - संपूर्ण आर्थिक पैकेज रु. 20 लाख करोड़
2. 12 अक्टूबर 2020 - आर्थिक प्रोत्साहन पैकेज रु. 73000 करोड़
3. 12 नवंबर 2020 - आर्थिक प्रोत्साहन पैकेज रु. 2.65 लाख करोड़

इसके अलावा ‘आत्मनिर्भर भारत’ पैकेज के अन्तर्गत कई सारे निर्णय लिए गए हैं खासकर एम.एस.एम.ई. की संख्या को बदलना तथा निजी उद्योगों को विभिन्न क्षेत्रों में भाग लेने के लिए बढ़ावा देना, साथ ही साथ सुरक्षा क्षेत्र में एफ.डी.आई. को बढ़ाने और सौर ऊर्जा क्षेत्र में सहायता की योजना है।

आत्मनिर्भर भारत को लोकप्रिय बनाने हेतु कुछ स्लोगन दिए गए हैं। जैसे- ‘वोकल फॉर लोकल’, ‘लोकल फॉर ग्लोबल’ और ‘मेक फॉर वर्ल्ड’। इसके अन्तर्गत उत्पादों को न सिर्फ भारत में बनाया जायेगा बल्कि इनका प्रमोशन भी सही तरीके से होना चाहिए ताकि प्रतियोगिता जारी रहे।

अब आते हैं कोविड नियंत्रण में भारत सरकार की अबतक की भूमिका और आत्मनिर्भर भारत घोषणा का असर।

भारत सरकार ने कोविड 19 चुनौतियों और खतरों से जूझने के लिए कई सारे महत्वपूर्ण कदम उठाये थे। जिनमें देश की सर्व स्तरीय नागरिकों की तरफ से बहुत बड़ा योगदान रहा। जिसके बदौलत वायरस के फैलने की क्षमता को कम करने के लिए सफलता प्राप्त हुई।

सरकार की तरफ से इस खतरनाक वायरस से लड़ाई करने के लिए लगातार आवश्यक सूचनाएँ दी गईं ताकि क्षमता अनुसार अपने आपको सुरक्षित रखने का प्रयास करें।

खासकर कोविड की पहली वेव के दौरान भारत ने कोविड-19 का धैर्य और आत्मनिर्भरता से मुकाबला किया। इसका सबसे बड़ा उदाहरण है कि देश में आज दैनिक 4.5 लाख पी.पी.ई. किट का उत्पादन हो रहा है, और ये आंकड़ा बढ़ता जा रहा है। इसके उपरान्त सरकार ने ऑटोमोबाईल क्षेत्र से जीवनदायी वेंटीलेटर बनाने में सहायता प्राप्त की जो कि एक सराहनीय कदम है।

देश में कोविड टीकाकरण एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। टीका की समयोचित उपलब्धता को लेकर देश के लोगों में क्रोध जाग्रत होने की स्थिति आ चुकी है पर इस मामले में निम्नलिखित कारणों को ध्यान में रखना होगा:-

1. अन्य देशों की तुलना में अधिक जनसंख्या होने के कारण भारत में टीका की जरूरत बहुत ज्यादा है।
2. भारत टीका उत्पादन में दुनिया का नेता है। भारतीय दवा कंपनियों द्वारा वैश्विक मांग की लगभग 50% आपूर्ति होती है।
3. भारत में टीका उत्पादन के लिए केवल सिरम इंस्टिट्यूट (कोविशिल्ड) और भारत बायोटेक (कोवैक्सिन), दो ही कंपनियों को टीका उत्पादन की इजाजत दी गई है। इस सिलसिले में विषाणु विज्ञानियों का कहना है कि अगर सरकार कुछ और कंपनियों को कोविड टीका उत्पादन के लिए लगा सकती तो टीके की कमी शायद महसूस नहीं होती। भारत में कई सारी बड़ी पब्लिक सेक्टर संस्थाएं जैसे सेंट्रल रिसर्च इंस्टिट्यूट, वी.सी.जी. वैक्सीन प्रयोगशाला और पास्टुर इंस्टिट्यूट ऑफ इंडिया के लाईसेंस तक का नवीकरण नहीं हुआ है। इस वजह से टीका उत्पादन में विलंब हो रहा है।
4. लेकिन अति आत्मविश्वास और गलत आकलन के फलस्वरूप कोविड की दूसरी वेव को नियंत्रण में रखना मुश्किल हो रहा था तब सरकार ने स्पूतनिक-5 कोविड वैक्सीनेशन के आपातकालीन प्रयोग की स्वीकृति दे दी। धीरे-धीरे काफी सोच और समझ के साथ सरकार ने ऑनलॉक - 1, 2, 3 आदि द्वारा विविध प्रतिबंधों में ढील दी और आर्थिक गतिविधियां शुरू की। लेकिन अति आत्मविश्वास और दूसरी वेव के बारे में उदासीन होने के कारण देश फिर से मुश्किल दौर से गुजर रहा है।

सरकार की तरफ से तमाम कोशिशों के बावजूद इस खतरनाक कोविड महामारी से छुटकारा मिलना इतना आसान नहीं है। विश्व के दूसरे देशों में कोविड की दूसरी तथा कई देशों में तीसरी वेव आ चुकी है। भारत में भी इसकी दूसरी वेव कई सारे राज्यों में असर दिखा रही है। टीकाकरण प्रक्रिया भी देश में चल रही है। लेकिन 130 करोड़ आबादी वाले देश में सबको टीका लगाना बहुत ही समय लेनेवाली प्रक्रिया है। तब तक लोगों को कोविड संबंधित स्वास्थ्य सलाह और प्रतिबंध जैसे मास्क पहनना, सैनिटाइजर का उपयोग करना, हाथ धोना, सोशल डिस्टेंसिंग पालन करना चाहिए।

मगर अफसोस की बात है कि लोगों की लापरवाही की वजह से भारत में कोविड फिर से पैर पसार रहा है और फिर से स्वास्थ्य तथा आर्थिक क्षेत्र में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो रही है।

उम्मीद है कि देश को आत्मनिर्भर बनाने हेतु उठाये गए कदम जिसमें शामिल है i) 2021 के अंत तक सबको टीका लगाना ii) 12 उच्च सम्पन्न राज्यों को आक्सीजन सोर्स के लिए चिन्हित करना iii) 100 नये अस्पताल में पी.एम. केयर फंड द्वारा आक्सीजन प्लांट की तैयारी, कोविड से लड़ाई को जीतने के लिए तथा देश के लोगों को सुरक्षित रखने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं।

उत्पल चटर्जी
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

दुर्गा



घोष बाबू की दो बेटियाँ थी। बड़ी बेटी 'दुर्गा' और छोटी बेटी का नाम 'लक्ष्मी' था। दोनों बेटियाँ मेधावी, शालीन और संस्कारी थी। घोष बाबू एक निजी अखबार के कार्यालय में कार्यरत थे। इतनी ही आय हो पाती थी कि परिवार का भरण-पोषण हो जाता था। किन्तु जैसे हर माँ-बाप की इच्छा होती है कि बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दें, अतः घोष बाबू ने भी अपनी हैसियत से उपर जा कर दोनों बेटियों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में भर्ती कराया। बेटियाँ होनहार थी। अच्छा परिणाम लाने की वजह, दोनों को छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। पढ़ाई-लिखाई के सम्बन्ध में बेटियों के लिए घोष बाबू को कभी सोचना नहीं पड़ा। बेटियों ने स्नातक और स्नातकोत्तर की परीक्षाएँ अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण की। बड़ी बेटी दुर्गा को एक अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में नौकरी मिल गयी।

घोष बाबू की छोटी बेटी लक्ष्मी गौर वर्णा, सुशील और सर्वगुण सम्पन्न थी, जबकि बड़ी बेटी दुर्गा इसके विपरीत 'श्याम वर्णा' थी। परन्तु गुणों में दोनों बेटियों का जवाब नहीं था। चित्रकला और सिलाई में दोनों निपुण थी। विवाह योग्य होने पर घोष बाबू बेटियों के लिए वर देखने लगे। किन्तु हमारी समाज व्यवस्था में श्याम वर्णा लड़की से कोई विवाह नहीं करना चाहता, चाहे वह कितनी भी गुणी क्यों न हो। अतः दुर्गा के लिए घोष बाबू वर ढूँढते-ढूँढते थक गये। तब उनकी पत्नी ने सलाह दी कि जितने लोग आते हैं वे लक्ष्मी को पसंद कर लेते हैं, तो क्यों न, वो लक्ष्मी का विवाह पहले कर दें? पत्नी की राय के अनुसार घोष बाबू छोटी बेटी के लिए वर देखने लगे और शीघ्र ही उन्हें एक अच्छा रिश्ता मिल गया। शुभ मुहूर्त देखकर लक्ष्मी का विवाह सम्पन्न हुआ और वह अपने ससुराल दिल्ली चली गयी। एक वर्ष पश्चात् उनका एक बेटा हुआ और वह सम्पूर्ण रूप से गृहस्थ आश्रम में व्यस्त हो गयी।

इधर घोष बाबू अपने कार्य स्थल से सेवानिवृत्त हो गये। चूँकि, उनकी नौकरी एक निजी संस्था में थी, उन्हें कोई पेंशन की सुविधा नहीं मिली। अब घर का खर्चा दुर्गा को वहन करना पड़ रहा था। दुर्गा अपनी जिम्मेदारी कुशलता से निभा रही थी। दुर्गा को पता था वो घर के लिए कितनी महत्वपूर्ण थी। उसके उपर माँ-पिताजी पूर्ण रूप से आश्रित थे। वह चुपचाप अपने कर्तव्य का निर्वाह कर रही थी। उसके मस्तिष्क में इसके अलावा और कुछ भी नहीं आता था। घर के समस्त कार्य, बाजार से आवश्यकता के सभी सामान लाना, स्कूल जाना, घर लौट कर बच्चों को ट्यूशन पढ़ाना, रात को भोजन उपरान्त स्कूल के बच्चों की कॉपियाँ चेक करना, फिर सोना - यही उसकी दिनचर्या थी। घोष बाबू ने छोटी बेटी के विवाहोपरान्त एक-दो बार दुर्गा के विवाह की कोशिश की थी। किन्तु परिणाम हर बार की तरह ही था।

घोष बाबू और उनकी पत्नी ने बेटियों को कभी लड़को से मिलने-जुलने नहीं दिया, मात्र स्कूल जाना, लौटकर पढ़ाई करना तथा अन्य कार्य करना। इससे दुर्गा के मस्तिष्क में कभी नहीं आया कि वह किसी से प्रेम विवाह कर ले। पड़ोस और परिचितों में सभी दुर्गा के गुणों की तारीफ करते थे। लेकिन धीरे-धीरे उसकी

उम्र हो चली थी। अब माँ-बाप भी मन ही मन नहीं चाहते थे कि उसका विवाह हो क्योंकि दुर्गा के चले जाने से घर की गाड़ी कैसे चलेगी? देख-भाल कौन करेगा? यही चिन्ता उन्हें सताती थी।

दुर्गा की कोई अपनी इच्छा, स्वप्न नहीं रह गये थे। वह मशीन की भाँति अपने कर्तव्यों का निर्वह करती जा रही थी। किसी को भी उसके बारे में सोचने का समय नहीं था। उम्र के साथ वह मानो सूख-सी गयी थी। उसका खुशी से भरा हुआ चेहरा कुम्हला गया था। वह अपनी जिम्मेदारियों के जेल में कैद हो चुकी थी। उसकी उम्र अब लगभग पचपन की हो चुकी थी। इसी बीच घोष बाबू का इंतकाल हो गया। घर में सिर्फ बूढ़ी माँ और वो थी। जब वह स्कूल के लिए निकलती थी, उसकी माँ में नकारात्मक सोच घर कर लेती थी। वह डरती रहती थी कि उसकी बेटी के साथ कुछ अनहोनी न हो जाय। फिर, उसका क्या होगा? कौन इस बुढ़ापे में उसकी देखभाल करेगा? इधर बेटी को भी घर की चिन्ता लगी रहती थी कि माँ अकेली है।

दुर्गा सचमुच जीवन-युद्ध लड़ रही थी। उसको यह समझ में नहीं आता था कि उसने जीवन में क्या गलती की है कि प्रभु ने उसकी किस्मत में सुख की लकीर नहीं बनाई। उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं रहा। ऐसी ही कई 'दुर्गा' हमारे बीच जीवन-युद्ध लड़ रही हैं।

सन्दीप कुमार सरकार
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी



कोरोना की भयावहता



किसे पता था कि वुहान शहर का कथित वायरस पूरे दुनिया की साँसें थाम लेगा, हवाई जहाज के पंखे जकड़ लेगा, रेलवे और फैक्ट्रियों के पैरों में बेड़ियाँ डाल देगा। अपने विकसित होने तथा संसाधनों का घमंड करने वाले बड़े राष्ट्रों को भी घुटने पर ला देगा और वायरस का मजाक बनाने वाले लोगों का शव जमीन में दफन करवा देगा।

वायरस का जन्म कहीं भी हो लेकिन पूरी दुनिया के लोगों में डर इस कदर घर कर गया है कि चाहे छोटे बच्चे हो या फिर घर से बाहर जाने वाले लोग सभी के मुँह पर मास्क रूपी ताला लग गया। हालांकि शुक्र है हमारे वैज्ञानिकों का जिन्होंने वैक्सीन बनाकर वायरस से बचाने की कोशिश की। किंतु वायरस का नया वैरिएंट और मजबूत होता दिखाई दे रहा है।

कोरोना के मामले में भारत भी एक अति प्रभावित देश माना जा रहा है। पूरी दुनिया के सभी देशों को पछाड़कर पहले स्थान पर भारत दिख रहा है। हमलोग सन् 2020 की भयावहता से अभी उबरे भी नहीं थे कि सन् 2021 का काल अपने जाल में लेने को आतुर है। 2020 का लॉकडाउन कैसे भूला जा सकता है। प्रवासी मजदूरों का पलायन तथा लोगों में भूखमरी हृदय विदारक थी। लोगों ने सड़क की लम्बाई के घमंड तक को पैदल नाप कर चकनाचूर कर दिया। किसी ने 1000 से 1200 किलोमीटर की यात्रा पैदल तय की तो किसी ने साइकिल से तय की, किसी ने रास्ते में भूखे-प्यासे दम तोड़ दिया तो किसी ने कोरोना बिमारी के कारण ही मौत को गले लगा लिया। और वो घटना कैसे भूली जा सकती है जिसमें रेल पटरियों को गद्दा समझ सो रहे भूखे-प्यासे प्रवासी मजदूरों पर से रेलगाड़ी निकल गई। थके हारे मजदूरों को क्या पता था कि यह रात उनके जीवन की आखिरी रात होगी।

कोरोना से मरने वाले लोगों में मजदूरों के अलावा डॉक्टर, पुलिसकर्मी, सफाईकर्मी आदि भी थे। कहते हैं डॉक्टर भगवान का रूप होता है। इस महामारी में डॉक्टरों ने भगवान से बढ़कर काम किया। पी.पी.ई. किट पहनकर 8-10 घंटे बिना शौच गये, बिना खाये-पिये सेवायें देना किसी युद्ध लड़ने से कम नहीं होगा। खासकर महिला डॉक्टर जो अपने परिवार से दूरियाँ बनाकर मरिजों की देखभाल करती हैं। वे भी माँ, पत्नी या बहन होंगी। अपने बच्चे से दूर रहना किसी माँ के लिए कितना दुखद है - यह तो एक माँ ही समझ सकती है। सन् 2021 की कोरोना लहर तो इतनी खतरनाक है कि श्मशान घाटों पर लाशों का अंबार लगा हुआ है। शवों को जलाने या दफनाने के लिए जगह कम पड़ती जा रही है। 2020 के बाद जिम्मेदारी एवं जबाबदेही दोनों को नजरअंदाज करना इस तरह भारी पड़ जाएगा, यह किसी ने सोचा भी नहीं था। गलतियाँ कहीं न कहीं हमारी भी हैं। हमने अपनी जिम्मेदारी (जैसे मास्क लगाना) छोड़ दी।

इस समस्या का हल किसी की आलोचना या प्रशंसा करना नहीं हो सकता है। क्यों न पूरी दुनिया की मानवजाति एकजुट होकर एक लक्ष्य से बिना किसी स्वार्थ/प्रतिस्पर्धा के एक दूसरे का सहयोग करते हुए इससे निपटने का प्रयास करे।

**अमरेश कुमार
वरिष्ठ लेखापरीक्षक**

उलझन



मेरे अजीज दोस्त का
 दोस्ती का नजराना है
 मेरा दिल भी उसकी
 दिल की महानता का दीवाना है॥
 अपनी जिंदगी से कई बार
 मैंने हार माना
 हालाँकि दोस्त का काम था
 मुझसे हार कर हर बार मुस्कुराना
 साइकिल के पीछे सवार मुझे चलाता
 उसने कभी नहीं बोला - बस कर
 मेरी माशूका के मुहल्ले में
 चक्कर खाते थे जो अक्सर
 क्रिकेट की जंग हो
 या फुटबॉल का मैदान
 मेरी बुरी गेंद में आऊट
 नहीं तो ऑफ साइड गोल से परेशान
 फिल्में देखते थे एक साथ
 पर चलचित्र मेरी पसंद का होता था
 आमिर का फैन होते हुए भी
 मेरे शाहरूख को गुरू मानता था
 बहस कोई भी हो
 हर वक्त मैंने ही विजय प्राप्त की
 सिर्फ एक बार ऐसा आया
 उसने हारने से इंकार कर दिया
 चर्चा माँ पर थी तो
 मेरी माँ सबसे अच्छी रहे
 कभी डांटती नहीं थी
 दिल से सबसे सच्ची रहे
 पहली बार उसने मेरी
 बात नहीं मानी
 लफ्जों को 'माँ' से जोड़-जोड़ कर
 जैसे बना दिया एक कहानी
 पता नहीं वो गा रहा था
 या सुना रहा था एक गजल
 अल्फाजों से खेलते हुए रची
 एक असली भगवान की शकल
 माँ जिसकी भी हो
 हर माँ एक जैसी है
 वो लेती नहीं देती है
 संतान की समृद्धि की प्यासी है।
 माँ है सूरज, प्यारी

माँ है एक
हम हैं सितारे
क्योंकि संतान हैं अनेक
एक बड़ी उलझन में पड़ा हूँ
हूँ एक सवाल के सामने खड़ा
क्या मां ने दोस्ती समझायी
या दोस्त ने माँ को - कोई समझाओ जरा।

सुरजीत घोष
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

सुरजीत घोष

बस्ती

जो तुम कहो
 ये बस्ती है
 लेकिन थोड़ी तो सस्ती है
 मेहनतकश लोगों की दुनिया है
 आँखों में अभी भी मस्ती है
 नित रोज अखाड़े होते हैं
 पानी की यहाँ पर हस्ती है
 पैसों की क्या बिसात यहाँ
 शराब अभी भी सस्ती है
 गाली-गलौज नित रोज लड़ाई
 ये तो यहाँ की नियती है
 कौन किसे प्यार करे
 आँखें अभी भी जलती हैं
 फिर भी उम्मीदों की दुनियाँ है
 लोगों में मानवता बसती है
 जो तुम कहो
 ये बस्ती है
 लेकिन थोड़ी तो सस्ती है।



ओम प्रकाश चौधरी
 वरिष्ठ लेखापरीक्षक

अनाथ



मैंने देखा
 छोटी-छोटी
 नाजुक अंगुलियों को,
 पकड़े हुए दरवाजे को,
 उन छोटी-छोटी
 प्यारी आँखों से
 प्रश्न मुद्रा में
 ताकते हुए
 हर आगंतुक को।
 डर के साये में जीते
 किसी अनजाने पहरों में,
 तलाशते हुए
 किसी अपने को
 हर अनजान चेहरे में।
 वह फूल-सा मुखौटा,
 वे सहमें से होंठ,
 शिकायत भी नहीं करते
 किस-किस ने दी चोट।
 कुछ तो इतने छोटे थे
 वालिद शब्द से
 परिचित नहीं,
 नन्ही सी जान को
 माने सब अपना,
 क्यों ये सामाजिक रीत नहीं?
 अपने-पराए के भेद से अनजान
 ये अबोध बच्चे हैं,
 देते सबको
 समान मुस्कान
 ये तन-मन से सच्चे हैं।
 देख कर इन प्यारे चेहरों को
 सोच में मैं पड़ जाता हूँ,
 इनके प्रति लोगों की सोच,
 सोच कर दंग रह जाता हूँ।
 कह कर लावारिस इन्हें
 कोई क्यों इनका तिरस्कार करते,
 क्या गलती है इनकी
 क्यों न सभी प्यार करते?
 हर जगह होता उपहास

करते सब इनका परिहास।
 कोई कहता आवारा हैं,
 कोई कहता नकारा हैं,
 कोई न समझे पीड़ा इनकी
 ये बेबस बेसहारा हैं।
 सुनता हूँ जब ताने बेहूदा हैं ये, बदतमीज हैं,
 गंदगी हैं समाज की, तुच्छ-सी चीज हैं।
 दे कर गाली, करते सब बहिष्कार,
 घूंट आंसुओं के पीते ये,
 होता यही हर बार।
 दुत्कार कर कहते कोई
 तुच्छ सी तू चीज है,
 बेगानी गोद में पले
 किसी अनिच्छा का बीज हैं।
 तब सच पूछो तो, रुधिर ऐसे खौल उठता है,
 आता है सैलाब समुद्र में जैसे हिमखंड टूटता है।
 तब ये प्रश्न होता है मेरा हर समाज से, समाज-निर्माता से,
 कोई कैसे पनप सकता है
 बिन अपनेपन के नाते से?
 तमीज तो होती इनमें भी,
 जनक ने अगर इनको पाला होता,
 होते माता-पिता इनके तो सोचो,
 क्या इनके जखम-छाले होते?
 परिणति है दरिंदगी की तो
 सजा दो उस दरिंदे को,
 कुछ तो दिखाओ दरियादिली
 जीने दो अब इस बंदे को।
 साया नहीं किसी का सर पे,
 क्या पता ये दैवीय प्रकोप है,
 ताने मारना अब इस जान को
 इंसानियत का लोप है।
 अब तो जागो ऐ समाज!
 पेशी इनकी मुर्कर कर दो,
 हुआ वक्त अब बहुत,
 बाइज्जत इन्हें बरी कर दो।

प्रमोद कुमार दास
 कनिष्ठ अनुवादक

लड़की

चुभता है यह एक सवाल
मेरे मन के किसी कोने में
ऐसा भी क्या दोष है ऐ जमाना
लड़की पैदा होने में

नौ महीना सींचा
जिसे अपने कोख में
मेरे-पैदा होते ही ऐ दुनिया
तू क्यों चली गयी शोक में

प्यार किया, दुलार किया
मेरा इंतजार किया बेसब्री से
फिर क्यों तूने छोड़ दिया
कचरे में बेरहमी से

बेटा होता तो क्या तू ऐ दुनिया
सीने से लगा लेती
एक बार बोल के देखा होता तो
बेटे वाला सारा फर्क
मैं बेटी ही दिखा देती

बेटी और बेटा में
तू कैसे भेद कर सकती है
तूने भी तो जन्म लिया एक मां से
क्या तू मां बिन रह सकती है

मां बहुत रोती हूँ मैं
जब बेवजह नन्हीं सी जान
कोख में ही
मार दी जाती है।



प्रभात कुमार
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

बेटी बचाओ

जिंदगी



कर्म के जीवंत प्रमाण हैं ये ठेले, खोमचे
चारों ओर फैले हैं कर्मयोगी
बिकती है यहाँ हर वो चीज
जो आपको रख सके
जिंदा, खुश।

नारियल पर भुजाली चलाता उसका हाथ
ऐसा प्रतीत हो रहा है, मानों
पत्थर तोड़ रहा हो,
पौरुष झलकता है उसकी भुजाओं में
बताती है उसकी फड़कती बाहें
कि निकम्मा नहीं मैं
शर्म नहीं मुझमें
हाथ नहीं फैलाता मैं
किसी के सामने कुछ लेने को

मशीन में ईख को डालते उसके हाथ
और चकरी को गोल-गोल घुमाकर
रस निकालती उसकी भुजाएं
जिसमें झलकता है आत्म-सम्मान
परिवार से दूर, परिवार के लिए
जी रहा है वह
हाथ में गिलास थमाते हुए इसकी मुस्कान
सवाल करती है - "क्या खुश हो तुम?"

पैसे लेने के बाद
जब वह कहता है- "फिर आइएगा"
तब लगता है - वह पैसा नहीं ले रहा आपसे
बल्कि दे रहा है - आपको
जीवन जीने की सीख
कि कठिनाइयां लाख हों, पर
मुस्कुराते रहो सदा।

भुट्टे वाला, लिट्टी वाला
मिठाई वाला, फल वाला
चाय वाला

फुटपाथ पर फैले सैकड़ों
ठेलों और खोमचों पर
इसी तरह
चल रही है, जल रही है जिंदगी
निखर रही है जिंदगी।

अरुण विकास
कनिष्ठ अनुवादक



अस्तित्व - एक आशा



जीवन है अत्यंत अस्थायी
कमल के पते पे पानी की बूंद
जैसा अस्थायी।
मानव जीवन भी वैसा ही अस्थायी।
मनुष्य जन्म लेता है एक खाली स्लेट की तरह
जन्म लेता है सामान्य ख्वाहिशों
और मानवीय मूल्यों को साझा करके,
उनमें से ही एक है जीवन का उद्देश्य
की खोज।

मानव जीवन को उद्देश्य की खोज और
ब्रह्माण्ड की मौन उदासीनता, दो असंगत पहेली के टुकड़े।
यदि जीवन स्वभावतः निरर्थक है,
तब केवल युक्तिसंगत प्रतिक्रिया है
आत्महत्या, या नहीं!

एकदम नहीं।

इंसान के पास आशा है,
आशा बहुत शक्तिशाली है।

किसी तरह आशा जीवन का अर्थ लाता है, शायद जीवन का अर्थ जीवन को अर्थपूर्ण बनाने में है।

आशा हमें विश्वास दिलाती है एक परम नियति में, जहाँ सब एक – है।

यह एक विश्वास की बात है, बौद्धिक क्षमता में समझा नहीं जा सकता।

हमें विश्वास होना चाहिए की,

जीवन एक है, मैं फिर वापस नहीं आ रहा हूँ,

कोई भी पल हमारा आखिरी हो सकता है।

जीवन अस्थायी है, केवल परिवर्तन स्थायी है,

हमारे पास इस सचेत अस्तित्व में केवल

कुछ क्षण हैं

तो उस क्षण का आनंद लें,

जैसे कि वह आपका अंतिम क्षण हो,

अस्तित्व ही है आशा, आशा ही अस्तित्व है।

भास्कर सेनगुप्ता
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

तुम्हें जीना है

जिंदगी एक अनसुलझी पहेली है
 इसे यों मिटाकर क्या पाओगे
 गमों के आंसुओं के सिवा
 तुम कुछ नहीं दे पाओगे
 यों डर कर जो तुम
 जिंदगी को खो रहे हो
 महक फूलों की यों ही कुचल रहे हो
 न पाओगे इस मधुवन को दोबारा
 मिटा जिंदगी को कहाँ खो जाओगे
 उस पार से फिर लौटकर नहीं आ पाओगे
 एक दिन तो यों ही चले जाना है
 साँसों का तो थम जाना है
 तो क्यों न निराशा की चादर को जला दो
 कष्ट की आहों को एक नई दिशा दो
 तोड़ दो उन जंजीरों को
 जो ले जा रही रसातल में
 कष्ट और वेदनाओं को अंगीकार कर
 जीवन पथ पर बढ़ चलो
 एक नया सवेरा आयेगा
 सुनहली किरणों में रास्ता दिखाएगा
 प्रकाशपुंज-सा फैल जाओगे
 जीवन में तुम
 कुछ कर पाओगे।



ओम प्रकाश चौधरी
 वरिष्ठ लेखापरीक्षक

फासले

एक फुटपाथ पर अपने लिए
आशियाना ढूँढ रहा है
दूसरा एक आशियाने के बावजूद
चार-पांच और आशियाने ढूँढ रहा है
एक दाने-दाने के लिए 'मोहताज' है
दूसरा ऐश कर रहा है 'ताज' में
एक खुद को 'फुटपाथ' का
मालिक समझ रहा है
दूसरा अपार 'एस्टेट' का मालिक
बन बैठा है

एक निर्विकार भाव व निश्चल
आँखों से दुआएँ देता है
दूसरा अहं भाव से बददुआओं
की बौछार करता है

एक के फटे-हाल नंगे बदन
में ही ठाट है
दूसरा सूट-बूट में ही
अपनी शान समझता है

एक प्राकृतिक ठंडी हवा में
सुकून की श्वास भरता है
दूसरे का - ए.सी. की ठंडी हवा में
दम घुटता है

दोनों खाली हाथ
इस दुनिया में आए हैं
दोनों खाली हाथ ही
इस दुनिया से जाएँगे
इस छोटी सी जिन्दगी में
दोनों के बीच फासले क्यों?
जिस दिन दोनों के दरमियां
'फासले' न रहेंगे
उस दिन ये दुनिया 'जन्नत'
बन जाएगी।



ओलिभ बारा
पर्यवेक्षक

सुंदरता

तो क्या हुआ साँवला है तन,
तो क्या हुआ काला है बदन,
किसी के कुछ कहने से
क्यों है फर्क पड़ना,
तन तो केवल तन है,
मन है असली गहना॥

दिखावे में क्या रखा है जनाब,
दिखावे की बात छोड़िए,
दिखावे से भी बहुत आगे,
सोच की बात छोड़िए॥

जैसी सोच, वैसा कर्म,
वैसा ही निश्चित फल,
सोच बदले तो, बदले जीवन,
बढ़ाएं सोच का तल॥

सोच बड़ी तो चुमिए गगन को,
झुके संसार कदमों में,
सोच से ही बना है इंसान,
सोच से ही हम इक्कीसवीं सदी में॥

झलकती सुंदरता बोली में,
झलकती सुंदरता विचारों में,
वैसे तो काली है कोयल,
पर झूमे हम इसकी मधुर बोली में॥

परखना है सुंदरता तो साहब,
परखिए सोच के हीरे को,
हर चमकती चीज सोना नहीं,
जानिए इस बात की गहराई को॥



रूपक भादुड़ी
पति -सोमा चक्रवर्ती भादुड़ी
कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक

कुछ तो कर

एक अरसा बीत गया नाहक बैठ कर
आलस्य को त्याग अब तो कुछ कर।

सिकुड़ गए हैं सोच संकिर्ण विचारों में
संकिर्णता को त्याग अब तो आगे बढ़।

माना कि लाखों हैं रुकावटें राहों में
चट्टानों को काट, चोटियों को फतेह कर।

दूर्ग हो या दरिया, या हो नदी उफान में
पार कर जाओ समंदर वो तुफान पैदा कर।

गुम हो गए रवि-शशि घनघोर वारिद में
दिक्-दर्शन वास्ते ध्रुव की तलाश कर।

वनाच्छादित है मार्ग, पथ है अंधेरे में
जूगनु की तलाश में पग तो आगे कर।

हो प्यासे और भटक गए रेगिस्तान में
प्राण-पखेरु वास्ते ओस-बुंद की प्रतीक्षा कर।

टूट रहे हों हौसले और मन फंसा है मायूसी में
खड़ा होने के वास्ते फिर से दृढ़ संकल्प कर।

बुझ गए हैं शोले, चिराग भी है झरोखे में
आग सुलगाने वास्ते चिनगारी पैदा कर।

रुठ गए हैं अपने और दरार बन रही रिश्तों में
पीरो सारे मोतियों को स्वयं धागा बन कर।



प्रमोद कुमार दास
कनिष्ठ अनुवादक

अजीब बात है न?



दिन भर जिम में पसीना बहाने वाले
कभी घर का छोटा काम भी नहीं करते हैं,
शाम को दूध लाने के लिए भी,
रिक्शा पर चढ़ जाते हैं।

अपने बूढ़े मां-बाप को छोड़कर,
कुत्ते-बिल्ली को पालतू बनाते हैं।
मां-बाप को पैसे देना तो दूर,
उनका पेंशन तक गटक जाते हैं।

अपने मित्र के एक कॉल के लिए,
आठ-आठ घंटे इंतजार करते हैं,
मां नास्ता देने में पाँच मिनट लेट हो जाए,
लोग सर पर चढ़ जाते हैं।

एक मां जो कभी अपने बच्चों को,
खाली पेट स्कूल नहीं भेजती थी,
वो बेटे विदेशों में नौकरी के लिए,
मां-बाप को वृद्धाश्रम में छोड़ जाते हैं।

लोग नदी जल को दूषित करके,
उसकी पवित्रता को कोसते हैं,
हाथ में कुल्हाड़ी लेकर,
पेड़ की छाँव खोजते हैं।

अजीब बात है न?

अमरेश कुमार
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

पत्थर बनाम इंसान



भाव हमारा यह नहीं कि
पत्थर न पूजा जाए, मगर
जिसकी जिन्हें जरूरत नहीं
दौलत उन पर क्यों लूटाई जाए

कुछ दान उन्हें भी दिया करें,
बाहर मंदिर के जो पड़े हैं,
कुछ भूखे, कुछ लाचार,
और कुछ पंक्ति में खड़े हैं।

कहीं दाने-दाने को तरसते बच्चे,
कहीं नदियां दूध की बहायी जाती।
इंसानियत इंसानों में हुई दफन
तनिक लाज भी न इनको आती।

क्या गजब है रीत दुनिया की,
जिन्दों को कोई पूछते नहीं,
मासूम भूख से रोते-बिलखते
दिखते दम तोड़ते हर कहीं।

बिन कपड़े कांपती काया,
झंझा का न निदान है,
किसी छत को ताकती निगाहें, पर
शवों को नित्य नवीन परिधान है।

क्या गजब के लोग हैं यहाँ के,
कैसा यह अंधा समाज है,
दया करूणा अब उनमें नहीं,
चढ़ावे का क्या खूब रिवाज है।

यही तो है समझ इंसानों में
उन्हें और कैसे समझाया जाए
विधि निर्माता विद्याधर को,
और कौन सा पाठ पढ़ाया जाए?

प्रमोद कुमार दास
कनिष्ठ अनुवादक

हिन्दी पखवाड़ा-2021 का उद्घाटन समारोह





अबनिन्द्रनाथ टैगोर कृत भारत माता का चित्र